मेनका



मेनका





लेखक

राजेश्वर झा

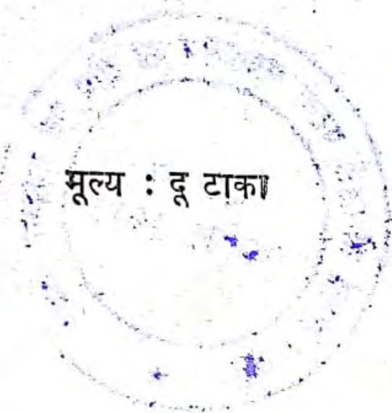
बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना



प्रकाशक

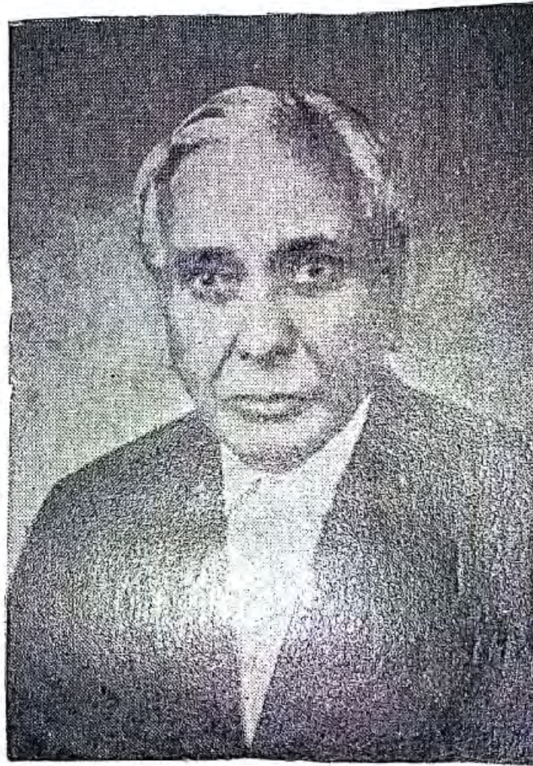
बबलू प्रकाशन

चिरैयाटाँड़, पटना–१



मुद्रक :
श्री कामेश्वर प्रसाद
कालिका प्रेस,
पटना–४

मेनका



सरस साहित्यक महान् प्रेमी पटना उच्चन्यायालयक
अधिवक्ता पं० श्री पीताम्बर झाजी कें
उपहार स्वरूप सस्नेह भेंट ।

—लेखक

प्राक्कथन

मेनकाक उपाख्यान महाभारतक आदि पर्व मे प्रथम तँ विश्वावसु एवं मेनका सँ प्रमद्वाराक जन्म और दोसर विश्वामित्र एवं मेनका सँ शकुन्तलाक जन्मक प्रसंग मे उल्लिखित अछि। एहि दुहू उपाख्यान मे मेनका सँ उत्पन्न संतानेक प्रधान आख्यान पाओल जाइछ तथा मेनकाक प्रसंग मे उपेक्षेक दिग्दर्शन होइछ।

ऋग्वेदक अनुसार मेनका परम व्योम मे अपन प्रणयी गंधर्वक संग विचरण केनिहारि एक अप्सरा छलीह। पद्मपुराणक अनुसार अप्सरा एवं गंधर्वक उत्पत्ति वाच् सँ भेल। वायुपुराणक अनुसार अप्सराक लौकिक और दैविक दू भेद अछि जकर क्रमशः चौंतीस तथा दश संख्या पाओल जाइछ। दैविक अप्सरा प्रायः ऋषि-मुनिक तपस्या केँ भंगक निमित्त भूतल पर अबैत छलीह। एहि वर्गक अप्सरा मे मेनका, सहजन्या, घृताची, प्रम्लोचा, विश्वाची तथा पूर्वचित्ती प्रमुख छलीह। रम्भा, तिलोत्तमा एवं मिश्रकेशीक स्थान लौकिक अप्सरा मे प्रमुख छल। नारायण ऋषिक कन्या भेला सन्ता उर्वशी एहि दुहू वर्ग मे विशिष्ट स्थान रखैत छलीह।

वायुपुराण गंधर्व-अप्सरा वा गंधर्व-पत्नीक रूप मे चौंतीस अप्सरा केँ कश्यप-पुत्रीक रूप मे उल्लेख करैछ। हेमचन्द्रक टीकाकार व्याड़िक अनुसार रम्भाक जन्म ब्रह्माक मुँह सँ, चित्रलेखाक हाथ सँ तथा मेनकाक मानस सँ भेल।

भागवतपुराणक अनुसार ऋषि एवं गंधर्व सन अप्सरो प्रत्येक मास सूर्य केँ अर्घ प्रदान करैत छलीह। विष्णुपुराणक अनुसार क्रतुस्थला मधुमास मे, पुंजीकस्थला माधव, मेना शुचि, सहजन्या शुक्र, प्रम्लोचा नभस, अनुम्लोचा भाद्रपद, घृताची आश्विन, विश्वाची कार्तिक, उर्वशी अग्रहण, पूर्वचित्ती पौष, तिलोत्तमा माघ तथा रम्भा फाल्गुन मे सूर्यक रथ मे बहैत छथि। अथर्ववेदक अनुसार अप्सराक आवास सलिल मे रहैछ। विश्वावसु गंधर्वक संग रहनिहारि नारीक सम्बन्ध मेघ, विद्युत् एवं तारागण सँ अछि। मूलतः अप्सरा सूर्य द्वारा जलवाष्प केँ ग्रहण कए ओस, भाफ एवं मेघ मे परिवर्तित मानव-रूप थिक। शतपथब्राह्मण अप्सरा केँ एक प्रकारक जल-जीवक

रूप मे उल्लेख करैत अछि। वेदोत्तरकालीन वाङ्मयक अनुसार अप्सरा सरिता एवं समुद्र मे रहैछ। अप्सरा शब्दक व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ थिक—'जल मे बिचरनिहारि'।

एहि उद्धरण सँ प्रतीत होइछ जे अप्सरा सलिलक दिव्य नारी एवं गंधर्वक पत्नी थिकीह जनिकर प्रणय-सुख कहुखन मानवो कें प्राप्त होइत रहैत छल। अथर्ववेद मे—उग्राजित्, उग्रंपश्या तथा राष्ट्रभृत—एहि तीन अप्सराक नाम तथा वाजसनेयि संहिता मे आन-आन अप्सराक संग उर्वशी एवं मेनकाक नाम पाओल जाइछ।

अप्सरा एवं गंधर्वक साहचर्य विवाहेसन अछि। फलतः एहि दुहूक साहचर्य कें विवाहक अवसर पर स्मरण कएल जाइछ तथा कहल जाइछ जे अविवाहिता युवतीक सम्बन्ध गंधर्व, सोम एवं अग्निक संग रहैछ। गंधर्व एवं अप्सरा उर्वरा शक्तिक प्रतीक थिक तथा अपत्य प्रार्थी लोकनिक निमित्त हुनका लोकनिक स्तुति फलदायक होइछ। गंधर्व शब्दक व्युत्पत्ति गंध सँ बूझि पड़ैछ।

मेनकाक उपाख्यान सँ प्रतीत होइछ जे प्राचीन एवं अर्वाचीन दुहू प्रकारक मनुष्यक समक्ष भावना एवं तर्क, हृदय एवं मस्तिष्क तथा निरुद्देश्य आनन्द एवं सोद्देश्य साधनक जोड़ा सतत विद्यमान छल जे भावना, हृदय, आनन्द एवं पुरुषार्थक काम पक्षक महत्व कें दिग्दर्शन करबैछ।

मनुष्यक एहि कामजन्य सुखक ग्रहण एवं वर्जनक सिद्धान्तक दू परिपाटी अत्यन्त प्रारम्भहि सँ पाओल जाइछ जे मनुष्यक बुद्धिक कल्पना पर मूलतः आधारित रहैत छल। एक परिपाटीक मनुष्य तँ अपना कें नारीक उद्दीपन-जन हाव-भाव, विविध कुचेष्टा तथा स्फुरण सँ पृथक राखि तपश्चरण मे निरत रहि सांसारिक सुखक समक्ष त्यागमय जीवन कें श्रेयस्कर बुझैत छल तथा दोसर परिपाटीक मनुष्य सांसारिक सुख-दुखहि मे जीवन बितबैत मोक्षक कामना करैत छल। महाभारत मे धर्म एवं अर्थ सँ काम कें श्रेष्ठ कहल गेल अछि तथा धर्म एवं अर्थ कें काठक उपमा सँ अलंकृत कए काम कें पुष्प-फल सन नितान्त श्रेष्ठ मानल गेल अछि। पद्मपुराण मे तँ धर्म सँ अर्थक, अर्थ सँ कामक और पुनि काम सँ धर्मक उत्पत्तिक चर्चा उल्लिखित अछि।

मनुष्य जीवन मे सूक्ष्म आनन्द एवं निरुद्देश्य सुखक जतेक सरिता अछि ओ सभकें सभ कामक पर्वते सँ निःसृत होइछ। जनिकर काम कुण्ठित, उपेक्षित

वा अवरुद्ध छैन्ह, ओ आनन्दक कतिपय सूक्ष्म रूप सँ वंचित रहि जाइछ। अतएव आसक्तिक बिना धर्म एवं कर्मक व्यापार नहि भए सकैछ तथा तदनुकूल व्यापारक बिना आनन्द एवं सुखक उपलब्धि नहि भए सकैछ। वस्तुतः जे व्यक्ति मोन केँ शान्त रखैछ ओकर काम अवरुद्ध भए जाइछ जाहि सँ ओ ने तँ स्थूल क्रिया मे निमग्न होइछ वा ने धर्माचरण मे। अतः ओ ने तँ सांसारिक सुखक अनुभव कए सकैछ वा ने आत्मिक आनन्दक स्पर्शहि। अतएव जे व्यक्ति धर्म एवं कामक उपेक्षा कए मात्र अर्थक सेवा करैछ ओ तँ हीने थिक संगहि ओहो उत्तम कोटि मे नहि अबैछ जे धर्मक साधना करैत अर्थ एवं काम दुहू सँ उदासीन रहैछ। वस्तुतः एहि तीनू सँ सन्तुलन भए जे व्यक्ति आचरण करैछ ओकरे जीवन सार्थक मानल जाइछ।

मनुष्य अपन त्रुटि केँ दबाए अनाशक्तिक भावना सँ मनुष्य सँ देवता बनबाक तँ चाहैछ किन्तु ओ प्रायः असफल रहैछ। कहुखन तँ ओ विघ्नक समक्ष अपना केँ ठाढ़ो नहि राखि सकैछ। फलतः जगत सँ ओ उदासीन भए जाइछ।

देवत्व वा मानवताक प्राप्ति सँ तात्पर्य थिक भगवद् गुणक अभिव्यक्ति। भगवान जीवमात्रक उद्गम तँ थिकाह किन्तु शरीर भौतिक भेला सन्ता मानव मोन अपनहि परिधि मे तन्मय रहि तेना ने सुखानुभव करैछ जे ओ ओहि विराट सत्ताधरि नहि पहुँच सकैछ।

मेनका एवं विश्वामित्रक उपाख्यान प्रायः एहि भावना केँ देखबैछ जे नर-नारी ओहि अव्यक्त सत्ताक प्रतिरूप थिक जे अपन मूल स्रोत सँ पुनर्मिलनक कांक्षा सँ प्रयास करैछ। नर देवत्वक प्राप्तिक निमित्त विकल रहैछ तथा नारी नरहि मे ओहि देवक दर्शन करैछ। अतः ओ नरहि मे एक रूप भए ओकरहि रूप मे ओहि विराट् सत्ता केँ प्राप्त करबाक प्रयास करैछ। प्रकृति और परमेश्वर दुहू थिकाहो तँ एके!

किन्तु परमेश्वरक प्राप्ति मे बड़ बाधा उपस्थित होइछ। एक दिसि दिव्यताक काल्पनिक शिखर अछि तँ दोसर दिसि अनलपूर्ण शोणितक प्रलोभनपूर्ण आह्वान। मनुष्य कहुखन तँ प्रेमक आकर्षण एवं मनोमोहकरूप मे फँसि जाइछ तँ कहुखन वीतरागी भए संन्यास ग्रहण करैछ तथा एहि तरहेँ द्विविधा मे निमग्न

रहैछ। प्रेम मानवीय प्रकृति थिक तथा संन्यास परमेश्वर थिकाह। पुनि मनुष्य समन्वय कएने बिना प्रकृति तथा परमेश्वर दुहू कें कोना प्राप्त कए सकैछ ?

प्रकृति तथा परमेश्वरक अद्वैतक अनुभव वा प्रेम एवं संन्यासक मध्य भावात्मक सन्तुलनक विचार तखनहि भए सकैछ जखन मोन सांसारिक प्रपञ्चक प्रलोभन सँ मुक्त भए शान्त एवं सुस्थिर भए जाइछ।

उपर्युक्त प्रसंग कें दृष्टिकोण मे राखि 'मेनका'क रचना कएल अछि। आश्चर्य तँ एहि वस्तुक अछि जे मेनकाक संतति प्रमद्वारा एवं शकुन्तलाक आख्यान पर आधारित कतिपय ग्रन्थ प्राचीन एवं अर्वाचीन कवि तथा लेखकक द्वारा निर्मित भेल किन्तु मेनकाक प्रति ओ लोकनि सतत उपेक्षेक भावना देखौलैन्ह। फलतः मेनका सँ सम्बद्ध प्रसंगक अभावक निमित्त हम एहि मे मात्र अपन कल्पना कें सन्निहित कएल अछि जकरा इतिहास सँ कोनहुटा सम्बन्ध नहि छैक।

हम अपन प्रिय मित्र कालिका प्रेसक मालिक श्री ब्रह्मदेव प्रसाद जीक प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करए चाहैत छी जनिक सहयोग एवं सद्भावना कें पाबि हम एहि पोथी सभ कें प्रकाशित कएल।

अन्त मे भाषाक दोष, भावक त्रुटि एवं हमर अल्प बुद्धिक कारणे पोथी मे जे किछु आन तरहक दोष हो ताहि हेतु मैथिलीक मनीषी विद्वान लोकनि सँ हमर निवेदन अछि जे मातृभाषाक प्रति एहि पोथी कें हमर स्नेह एवं श्रद्धा बूझि हमरा क्षमा करथि।

पटना, १ जून १९६९ ई०

—राजेश्वर झा

मेनका

[तपोभूमि : महर्षि विश्वामित्र तपश्चरण मे निरत छथि। मेनका नभोमण्डल सँ भूतल पर उतरि हुनकर तपस्याक भङ्गक क्रम मे]

अरण्यक निर्मल शान्त तपोवन मे नवयौवन सँ उल्लसित कासनी रंगक साड़ीक किनारी सँ परिवेष्टित पूर्णिमाक चन्द्रमा सन मुखमण्डल, मन्द गति, मृदुल चितवन एवं मधुसिक्त मुस्कान सँ युक्त मेनका अपन सुकुमार चरणक अशिंजित नूपुरक झंकार सँ समस्त दिशा केँ झमकबैत महर्षि विश्वामित्रक पर्णकुटीक समीप नभोमण्डल सँ धरातल पर उतरलीह। वासंती कुसुम सन सुकुमार अवयव सँ उपलक्षिता ओ उत्कट प्रेम-पीड़ा सँ कातर भए समस्त मानव केँ संगहि हर्ष एवं कामक उद्वोधन करबैत छलीह।

ओकर भाव पुलकित तन वर्षाक पुष्पित कदम-तरु सन तथा नेत्र नीलकमल पत्र सन प्रतीत होइत छल। स्वर्णसंभूत लतिका सन ओहि कान्तिमयी केँ देखि मुनिक चित्त चञ्चल भए उठलैन्ह। वासना अपन कालिमा केँ हुनक हृदय मे प्रकट करए लागल तथा ऋषिक समस्त धैर्य लुप्तभए गेल। ओ ओकर कमल रूप मुख, मधु रूप वचन, भ्रमर रूप नेत्र, पल्लव रूप अधर एवं केसर रूप दाँत केँ निहारैत नितान्त स्नेह सँ पूछल—"हे सुन्दरि! अहाँक कमल सन रतनार एवं तरल लज्जायुक्त गर्व हास तथा

विलासक भङ्गिमा सँ सम्पन्न नेत्र मृग-नेत्रहु केँ पराभव करैत अछि। अहाँ के छी ?"

विश्वामित्रक एवंक्रमक प्रश्न केँ सूनि मेनकाक संशय दूर भए गेल तथा ओ अपन ललित लास्य सँ मुनिक मोन मे ललक जगाए तीक्ष्ण कटाक्ष सँ हुनकर मर्मस्थल केँ आघात एवं कारी वेणी सँ काम केँ उद्दीप्त करैत बजलीह—"वृक्षक समीप लोक शीतलताक निमित्त जाइछ महर्षि ! जँ ओहि वृक्षहु सँ आगिक लपट बहराए तँ पुनि ओकरा निमित्त अन्यत्र कतए प्रश्रय भए सकैछ ? मनुष्य वनक आगि सँ भयभीत भए जलाशय मे प्रविष्ट होइछ किन्तु जँ जलहु सँ ज्वाला प्रकट होमए लागए तँ ओ बेचारा कतए जाए महामुनि ?"

मेनकाक उपर्युक्त वचनक माधुर्य मे यद्यपि भावनाक विशुद्धि कम और रति भावक चेष्टा अधिक छल तथापि ओकर नारी सुलभ आकर्षण, मान एवं मर्यादा जन्य विकर्षणक सम्मिलित रूप साकार भए मुनिक मोन केँ विमोहित कएल। ओ ओकर रूप-माधुरीक पान करैत बजलाह—"हे सुन्दरि ! दुख सँ पीड़ित मानवक सेवा प्रत्येक मानवक धर्म थिक। सेवा एवं विनम्रता मे घनिष्ठ सम्बन्ध अछि। विनम्र मानवे मे तँ सेवा भाव जाग्रत होइछ परन्तु मानवक आचरण तँ ओहि चक्रवाक सन होइछ जे कमल नल केँ तोड़ि खेबाक तँ चाहैछ किन्तु कमल तन्तु केँ चन्द्रमाक किरण बूझि नहि खाइछ, कमल पर पड़ल जल-बिन्दु केँ तारा बूझि पियासल भने रहैछ किन्तु पान नहि करैछ तथा कमलक

कारी छाह मे मड़राइत कारी भ्रमर कें देखि संध्या बुझैत अछि।"

मुनिक स्नेह पूर्ण वाणी कें सूनि मेनका रागात्मक अनुभूतिक निमित्त आशा-निराशा, सुख-दुख, हर्ष-विषाद आदि विरोधी भावनाक मध्य प्रवाहित होइत पुनि नितान्त विनम्र भए बजलीह— "हे तापस! भक्त भगवानक संग चानन मे जल सन एकत्व भए स्वयं चाननक सुगन्ध सँ पूर्ण भए जेबाक चाहैछ। ओकर प्रेम चकोर सन होइछ जे निरन्तर चन्द्र-किरणक रूप-सुधाक पान कए अपन अन्तरतम कें शीतल बनबैछ। ओकरा अपन आराध्य सँ दीप एवं बाती सन अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहैछ जे स्वतः तिल-तिल जरैछ और दोसराक हेतु आलोक विकीर्ण करैछ किन्तु ओकर आचरण तँ ओहि साँझक एकाकी तारा एवं चौठक चाँद सन होइछ जकरा दिसि कलंकक डर सँ क्यो तकबो धरि नहि करैछ महामुनि!"

मेनकाक पुष्पित चमेलीक लता सन आलाप, कामदेवक हिड़ोला सन प्रकम्पित कर्ण युगल, विषक फूल सन नयन कचोल, श्वेत शंख सन प्रफुल्लित कपोल तथा अमृतक कुंभ सन उरोज महर्षिक अन्तस्थल कें आघात कए मन-मानस कें झकझोरए लागल। ओ मेनकाक रूप-पाश मे तेना ने आबद्ध भए गेलाह जे अपन ज्ञान रूपी कृपाण कें दूर फेकि चित्तक चञ्चल भावनाक वशोभूत एवं सांसारिक आसक्ति मे अनुरक्त भए सर्वस्वभाव सँ अपना कें समर्पित कए नितान्त आर्द्र भए बजलाह—"हे मेनके! प्रेमक आतुरता तँ

समाजक उपहासक उपेक्षा करैछ किन्तु अहंकार ग्रस्ता नारी तँ सर्वथा परित्यक्ता होइछ।"

मुनिक एवंक्रमक आतपयुक्त वाणी मे यद्यपि मेनका केँ नारीक दुर्लभ कान्तिक समक्ष पुरुषक धैर्यक ह्रासक आभास भेलैक तथापि ओ अपन सौंदर्य मद मे मत्त एवं उल्लसित यौवन सँ प्राणीमात्रक चित्त केँ आकृष्ट करैत, हँसरूपी स्वच्छ परिधानक आधा आंचर केँ सरकाए अपन सुकुमार हाथ सँ भ्रमर पटल रूपी केशकलाप केँ सोझरबैत एवं मादक मुस्कान तथा तीक्ष्ण कटाक्ष सँ मुनि केँ पुनि मर्माहत करैत बजलीह—"सोनाक परख कसौटी पर तथा ओकर विकारक जाँच प्रज्वलित आगिक लपट मे तपौला पर होइछ महर्षि! कुसियारक ग्रन्थिवहुलता दोषपूर्ण नहि भए सरसताक तथा चन्द्रमाक वक्रता शोभाक निमित्त होइछ। द्वितीयाक चाँन यद्यपि टेढ़ रहैछ तथापि ओ कलंकित नहि भए शिरोभूषण बनैछ महामुनि!"

मेनकाक अनुराग मे यद्यपि गाम्भीर्य एवं शुद्ध भावनाक अभाव छल तथापि विश्वामित्र जल मध्य स्थित नाव सन जे भंवर मे पड़ि अन्यत्र नहि जाइछ ओकर स्नेह मे स्थित अपन समस्त चित्तवृत्ति केँ ओकरहि मे केन्द्रीभूत करैत बजलाह—"मानसिक शुचिता सँ शून्य प्रेम वासनाक प्रतिरूप बनि पतनक दिसि लए जाइछ सुन्दरि! नदीक किनारक वृक्ष सन कामिनीक निकटक पुरुषक विनाश होइछ।"

माधुर्यक निर्मलताक मानसिक उल्लास मे अपन वासनात्मक भावनाक परिष्कृतिक प्रसंग मे संशयक उत्पत्ति सँ मर्माहत होइत मेनका भौं रूपी धनुष पर चढ़ल कटाक्ष रूपी बाण सँ हुनक मर्मस्थल कें बेधैत एवं अपन कारी तथा तिरछी गूथल वेणी सँ कामना कें उद्दीप्त करैत व्यथाक स्वर मे बजलीह— "आतप सँ खिन्न पथिक जाहि छाह मे विश्राम करैछ ओ छाहो आतपक भय सँ बाहर नहि होइछ महामुनि ! रूप, गुण, शील एवं औदार्य सँ परिपूर्ण रमणी, अमल यौवन सँ युक्त उत्कट प्रेम पोड़ाक चिंता सँ कातर भए, निरन्तर जरला सँ दीप सन क्रमशः क्षीण भेल जाइछ किन्तु ई मायावी जगत तँ अखण्डित सरित प्रवाह सन रीत रहितहुँ पूर्ण प्रतिभासित होइतहि अछि संगहि पुरुषक आचरण तँ ओहि रत्नाकर सन होइछ जे क्षार देलहुं पर नदी सँ कथमपि नहि विरमैछ तथा नारीक आचरण विशाल गिरिवरक अन्तराल मे निवास केनहार मयूर सन होइछ जे मरलहु पर बल्लरीसन अपन प्रिय रूप तरुवर कें नहि छोड़ैछ।"

मेनकाक श्वेत, श्याम एवं रतनारि नेत्र मे मुनि कें हलाहल विष एवं मदक भान भेलैन्ह तथा ओ अपन रहल-सहल धैर्य कें समेटि बजलाह—"हे मेनका ! अहाँक तन जगतक अश्रुधारा सँ धोल तथा चरणक रक्तिम राग त्रिलोकक हृदय-रक्त सँ रंजित अछि। अहाँ मुक्तवेणी एवं वसनहीन भए विकसित विश्व-वासनाक अरविन्द-हृदय पर अत्यन्त लघुभार सँ अपन युगल चरण कें रखैत अखिल मानस-स्वर्ग मे अनन्तरूप सँ क्रीड़ा करैत

छी। अहाँक अतुल रूप राशि कें देखि जगतक मानव विमोहित अछि। अहाँक कानक कर्णफूल, कुण्डल, बाँहिमूल मे अंगद, नितम्ब-प्रदेश मे श्रोणीसुत्र, मणिबन्ध मे उर्मिकाकटक, माथ मे चूड़ामणि, शिखाद्दढ़िकाक अतिरिक्त उद्धर्तित, बितत, संघाटय, ग्रंथिमत, अवलंबित मुक्तक, मंजरी एवं स्तवक एहि आठ प्रकारक माला सँ विभूषित तथा कस्तूरी, कुंकुम, चानन, कपूर, अगरु, कुलक, दन्तसम, पटवास, सहकार, अलक्तक, आजन एवं गोरोचन आदि मण्डल द्रव्य सँ अलंकृत अंग-प्रत्यंग अहाँक यौवन शोभाक अनु-प्राणक थिक। एहि अंग-प्रत्यंग मे पुलक, विपुलता एवं सौष्ठव प्रस्फुटित भए काम कें अनुरंजित करैछ जे मनुष्यक विनाशक कारण बनि जाइछ महादेवी!

मुनिक तर्क युक्त बचन कें सूनि मेनका अप्रतिभ भए बजलीह—"पाण्डित्य एवं तर्क मे उलझल विद्वान कर्मक वास्तविक मार्ग सँ दूर रहैछ महामुनि! परात्पर सत्य तर्कक नहि स्वानुभूतिक विषय थिक। जीवनक सहज रूप त्याग एवं तपस्या मे सन्निहित नहि रहि राग मे पाओल जाइछ जे सुखानुभवक प्रधान सोपान थिक। सुखानुभवक प्रधानतः संवृत्त एवं विवृत्त दू रूप अछि। वीर्यक्षरण मूलक इन्द्रिय सुख स्वरूप कें संवृत्त तथा ओकर शान्त एवं निश्छल स्वरूप कें विवृत्त कहल जाइछ। संवृत्त सत्यक भौतिक रूप तथा विवृत्त पारमार्थिक थिक जकरा परात्पर सत्य सेहो कहल जाइछ। अतएव पुरुष काममय थिक। काम मोनक रेतस थिक जे प्रारम्भ मे शिशुक कोमल हृदय-स्पन्द मे पल्लवित

होइछ। किन्तु ओकरा मात्र ओ व्यक्ति चिन्हैत छैक जे अपन संस्कार जनित भावना कें छोड़ि सत्य कें देखबाक लेल उत्कण्ठित रहैछ। अतएव काम जे शक्तिक कतिपय उल्लास एवं व्यक्तिक विकास तथा उन्नतिक कारण स्वरूप थिक कौखन तँ मानस-शक्तिक रूप मे और कौखनशारीरिक रूप मे प्रकट होइछ महामुनि।''

प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान, अर्थापत्ति एवं अनुपलब्धि एहि छौ प्रमाण सँ युक्त अपन श्रेष्ठ लावण्यक ज्योत्सना सँ चन्द्रमा कें तथा कर्धनी, पायजेब प्रभृति अलंकारक मधुर शब्द सँ राज-हँसनीयहु कें निरादर करैत मेनकाक तर्कयुक्त वाणी कें सूनि मुनि नितान्त विस्मित भए बजलाह—''हे मनोरमे! अहाँक केश कलाप संयमी, नेत्र काननयी तथा सुकोमल अंग अनुराग कें तँ उत्पन्न करैछ किन्तु पुरुषक निमित्त प्रकृतिक सृष्टि मे प्रवृत्ति युक्ति-युक्त तँ भए सकैछ किन्तु निवृत्ति मे कोनहु टा युक्ति नहि परिलक्षित होइछ। जेना नर्तकी प्रेक्षक कें अपन नृत्य-कला देखाए नृत्य सँ निवृत्त भए जाइछ तहिना प्रकृति अपन स्वरूप कें प्रकाशित कए निवृत्त भए सतत स्वतंत्र आचरण मे रत तँ रहितहिँ अछि आ जँ पुरुष प्रकृतिक एहि दोष कें बूझि जाइछ तँ प्रकृति ओहि पुरुषक समक्ष जेबाक साहसो धरि नहि करैछ मेनके! तदर्थ विवेकी निरूपम एवं निरतिशय सुखे कें पुरुषार्थ मानैछ तथा ऐहिक वा पारलौकिक सुख कें ओ उपेक्षाक दृष्टि सँ देखैछ।''

महर्षिक प्रवृत्ति-निवृत्तिक प्रसंगक उपर्युक्त वाणी कें सूनि मेनका अपन प्रकाशमान लावण्य, अनुपम शील, अलौकिक नम्रता

तथा अर्थगर्भित नीतिक संग अपन मन्द मुस्कान एवं प्रफुल्ल नयन कमल सँ मुनिक हृदय केँ हरैत अत्यन्त सरस वाणी मे बजलीह— "हे तापस ! संसार शक्तिक उन्मेष शक्ति आकर्षण एवं विकर्षण दुहू मे अभिव्यक्त होइत स्वस्थिति केँ प्राप्त होइछ। आकर्षण तथा विकर्षण दुहू परस्पर विरुद्ध प्रतीत तँ होइछ किन्तु ई दुहू एके शक्तिक दू उल्लास थिक तथा एहि सँ जीवन मे शान्ति प्राप्त होइछ जकर प्रवृत्तिक स्वभावानुसार मिथुन-वासना तथा मृत्यु-वासना दू भेद अछि। मृत्यु-वासनाक उद्देश्य मृत्यु केँ उत्पन्न करब थिक जतए कोनो प्रकारक चांचल्य नहि पाओल जाइछ। वास्तविक जीवन-वासना तँ मिथुन-वासने थिक जकर उद्भव दू जीवक समागम सँ होइछ। मृत्यु-वासना निवृत्तिक निमित्त प्रवृत्तिक आश्रय लैछ, मिथुन-वासनाक संग मिलि एक दोसरा केँ सहायता करैत अद्वय शातावस्थ‌ाक हेतु प्रयत्न करैछ। मृत्यु-वासना जड़-चेतन रहित अवस्था केँ तथा मिथुन-वासना अद्वैतता केँ प्राप्त करैछ। अतएव समग्र वासना, समस्त संसार वैचित्र्यक मूल उद्देश्य शान्तावस्थाक उपलब्धि थिक। जाबत वासनाक आवेग रहैछ ताबतहि मानव प्रवृत्ति-निवृत्ति-चक्र मे एवं आकर्षण-विकर्षण रूपी भव-पाश मे आबद्ध रहैछ महामुनि !"

मेनकाक अद्भुत ज्योति, सत्य, अनन्त सुख एवं अनादि प्रेम सँ युक्त तथ्यपूर्ण वाणी मुनिक मोन मे संशय केँ उत्पन्न कएल तथा ओ कर्त्तव्याकर्त्तव्यक निर्णय मे असमर्थ भए बजलाह—"हे षोड़सी ! अहाँक सुन्दर मुँहक समक्ष दीप एवं फूल दुहूक प्रभा मलीन प्रतीत

होइछ। ओ हृदय हृदय नहि पाथर थिक जकरा अहाँक प्राप्तिक चाह नहि अछि तथा ओ नेत्र नेत्र नहि थिक जकरा अहाँक दर्शनक लालसा नहि होइछ किन्तु प्राणीमात्रक जीवन जलक तरंग सन चंचल तथा जल-फेन सन क्षणभङ्गुर थिक। पुरुषक आचरण तँ कदली वनक हाथी सन होइछ जे कागजक हथिनी कें देखि ओकर समागमक लिप्सा मे शिकारीक जाल मध्य फँसि नाना प्रकारक दुख कें झेलैछ। तदर्थ दुर्लभ मनुष्य-शरीर कें पाबि एवं वेद-शास्त्रक अध्ययन कए जँ मनुष्य संसार-बन्धन मे बंधि जाए तँ एहि सँ के मुक्त भए सकत ? अतएव विवेकी ज्ञानक उदय सँ शान्तिक प्राप्ति करैछ जाहि सँ तृष्णा शान्त भए जाइछ।

हे मेनके ! विषयक संसर्ग सँ तृष्णाक वृद्धि होइछ जे मनुष्य कें अशान्त, उद्विग्न एवं चंचल बनाए अनाचार मे प्रवृत्त करैछ। वासना नितान्त प्रबल एवं स्थायी थिक। ओ तेना ने मानव कें अपन पाश मे आबद्ध करैछ जे जाग्रतक कोन कथा स्वप्नावस्थाहु मे ओ ओकरा प्राप्त तँ करितहि अछि मृत्युप-रान्तो ओकर संग नहि छोरैछ। अतः जन्म-मरणक कारण-स्वरूप स्त्री सम्मुख मे तँ अमृतक किन्तु परोक्ष मे विषक आचरण करैछ। तदर्थ ज्ञानीक निमित्त ओ ओहि हँस सन अछि जे मेघ मालाक कारणे नीलाम्बर तथा अपन चिर परिचित निर्भर सरस कमलिनी कें देखि ने तँ ओकरा छोड़ितहि बनैछ आ ने ओ ओतए रुकि ओकर प्रत्याशे करैछ।"

विश्वामित्रक उपयुक्त कथन मे यद्यपि हुनक मानसिक दुर्बलता पाओल जाइत छल तथापि हुनक अन्तःकरण केँ मेनका सौंदर्यक प्रभाव सँ तथा आत्मा केँ अपन विशिष्ट गुण सँ जीतैत बजलीह —"हे महामुनि ! मलय पवन केँ बहितहि स्त्री स्वतः सोझ भए जाइछ। गुलाब मे काँट रहैछ तेँ की काँटक डरे लोक गुलाब केँ नहि तोड़ैछ तथा चाननक गाछ पर विषधर रहैछ तेँ की ओकरा डरे क्यो चानन केँ ग्रहणो नहि करैछ ? प्रेममय जीवने तँ जीवन थिक ! जकरा जीवन मे प्रेमक अभाव पाओल जाइछ ओकर जीवन सारहीन अछि। प्रकृति जड़ और पुरुष उदासीन थिक। दुहूक संसर्ग सँ प्रकृति चेतनावदिव भए जाइछ तथा सृष्टिक प्रारम्भ होइछ। जगत मध्य विशेषतः दू गोट वस्तु चैतन्य एवं भिन्नताक दिग्दर्शन होइछ। जँ वासना पूर्ण रूप सँ एहि दुहू केँ संवरण करैछ तँ चैतन्य जड़ावस्था मे परिणत भए जाइछ। स्त्रीक मर्यादा मिथ्याभिमान, उन्मुक्त यौवन एवं सम्मोहन मे सन्निहित नहि रहि ओकरा अपरिचित रहबा मे, ओकर प्रभा पतिक सम्मान मे तथा सुख परिवारक कल्याण मे पाओल जाइछ। मानसिक क्लेश सँ पीड़ित व्यक्ति अपन प्रेयसीक अंक मे जाए ओतबेक सुखी होइछ जतेक सूर्यक किरण सँ तप्त व्यक्ति जल-पान सँ आनन्दित होइछ।

हे महर्षि ! स्त्रीक जीवन पुरुषक बिना तथा पुरुषक जीवन स्त्रीक बिना निरर्थक थिक। स्त्री और पुरुष एक दोसरा पर निर्भर रहि पारस्परिक सहयोग सँ उद्देश्यक पूर्त्ति मे साधक बनि छाइछ।

ई दुहू एक दोसराक विरोधी एवं प्रतिकूल नहि भए अनुकूल एवं अनुगामी थिक जे एक दोसराक सुख-दुख मे भागी भए संसारक कार व्यवहार चलेबाक निमित्त उत्पन्न होइछ। अतएव हे महर्षि ! अपरिपक्व मोने दसो दिसा मे चंचल भए विचरण करैछ किन्तु जखनहि ओ परिपक्व भए जाइछ तँ निश्चल भए अपन कर्त्तव्य केँ निर्धारित करैछ।"

मेनकाक चन्द्रसन मुखमण्ल केँ देखि मुनि केँ चन्द्रकान्त मणिक नील केश कलाप सँ नीलमणिक तथा रक्त कमल सन हाथ केँ देखि पद्मराग मणिक भ्रम भेलैन्ह तथा ओ ओकर मादक रूप केँ पान करैत आवेश मे बजलाह—"हे सुन्दरि ! अहाँक सौन्दर्य मदहु सँ उत्कृष्ट अछि। ई जकरा छैक ओकरो और जे व्यक्ति ओकरा देखैछ तकरो मतवाला बनबैछ। सुन्दरीक सौंदर्य के देखि मोन एवं इन्द्रिय केँ वश मे रखनिहार पूर्ण अभ्यासीयहु अपन मोन केँ वश मे रखबा मे असमर्थ पाओल जाइछ। हे मेनके ! पुरुष ताबतहि सन्मार्गी, इन्द्रियविजयी, लज्जाशील एवं विनीत रहैछ जाबत ओ कामिनीक कटाक्ष सँ घायल नहि होइछ। अहाँक प्रेमक मार्ग यद्यपि विघ्न सँ परिपूर्ण अछि किन्तु अहाँक हार-लताक चंचल मोती एवं चाँदनीक चमत्कार सन श्वेत वस्त्र मध्य हमर मोन ओझराए हमरा ओहि वोहर मार्गक यात्राक संकेत कए रहल अछि।"

पुरुषक पौरुष पर रमणीक दर्पपूर्ण प्रोत्साहनक विजय मेनकाक केशपाश मे कुटिलता, अधर मे राग एवं नेत्र मे तरलताक

वृद्धि कएल तथा ओ अपन विजयक गर्व मे उन्मत्त भए निष्ठुर नि:श्वासक झोंका सँ नाकक मोती केँ हिलबैत बजलीह—"हे तापस ! ई अनुनय एक कलावतीक प्रार्थना नहि भए एक प्रेयसीक कामना थिक जे अपन आराध्यक अतिरिक्त और ककरहु नहि अपन हृदय समर्पण कएलक। प्रेम अनन्य भावनाक समर्थक थिक तथा नितान्त दूर रहलहुँ पर वास्तविक प्रेमक असाधारण स्नेह शशधर एवं मकरधर तथा बहिन एवं मेघसन सतत विद्य-मान तँ रहितहि छैक संगहि स्त्री-पुरुषक प्रेम कलुषित नहि भए पवित्र, शक्तिमान एवं सर्वव्यापी थिक। जगत स्त्री एवं पुरुषे सँ उत्पन्न भेल अछि तथा स्त्री पुंसात्मके थिकीह। परमात्मा शिव थिकाह तँ माया शिवा। पुरुष परमेश्वर थिकाह तँ प्रकृति परमेश्वरी। पुरुषमात्र परमेश्वर थिकाह तँ स्त्रीमात्र परमेश्वरी। एहि दुहूक मिथुनात्मक सम्बन्धे तँ मूल वासना थिक जकरा आकर्षण वा काम सेहो कहल जाइछ। वासना प्राग्भवी थिक जे जनक-जननीक शुक्र एवं रजक संग संतान केँ प्राप्त होइछ। जन्म मे मरण अछि। उत्पत्ति मे वीजरूप सँ मरण अछि। मनुष्य मर्त्य थिक। वासना प्रत्येक क्रिया केँ रंजित करैछ। मृत्यहु प्रत्येक क्रिया केँ अपन छाह सँ आवृत्त करैछ। तदर्थ हे स्वामी ! जे व्यक्ति रत्नक निधि केँ छोड़ि अपना केँ तट पर फेकैछ ओ व्यक्ति शंख सन अस्पृश्यक संसर्ग मे परि अनादर केँ प्राप्त करैछ।"

मेनकाक रत्न जटित कंगणक मधुर झंकार सँ मुनिक अन्तः करण

झंकृत भए गेल तथा हुनक मोन कहुखन तँ पतंग सन नभोमण्डल मे उड़ए लागल और कहुखन ओ मेनकाक नैसर्गिक साधन, उत्फुल्ल यौवन, तरल विद्युत्प्रभा सन जाज्वल्यमान रूप एवं अलौकिक नम्रताक रसास्वादनक कल्पना मे विभोर भए जाइत छल। किछु कालक उपरान्त ओ निरवता केँ भंग करैत बजलाह —"हे सुन्दरि ! अहाँक मनोज्ञ कान्ति, सौन्दर्य एवं मद-मत्त नयन अवसर—अनवसरक बिना विचार कएने यद्यपि हमर मोनक बात प्रकट कए दैछ तथा हम स्वत: अपना केँ ओहि मे करपूर सन लुप्त पबैत छी तथापि चित्त पुनि कहैछ जे मुग्ध अङ्गनाक आलिङ्गन एवं दुष्ट व्यक्तिक मैत्री दुहू समान होइछ जे दुहू अपन हृदय केँ दूर एवं रहस्य केँ गुप्त रखैछ तथा सतत सशङ्कित रहैछ। अतएव अहाँ मे हमर मोन यद्यपि आसक्त अछि किन्तु हृदय केँ चंचल पवन सँ प्रेरित काँट सन अहाँक मदन सँ चंचल यौवन वस्त्रांचल सन विदीर्ण करैछ तथा अन्त:करण प्रेम-भङ्गक शंका उत्पन्न करैछ।"

मेघ-मालाक सान्द्र नीलिमा मे तड़ित-लता सन क्षण-क्षण मे झिलमिला कए प्रक्षिप्त होइत मेनकाक तारुण्य विकास मुनिक उपर्युक्त वाणी सँ विजयानुभवक उल्लास मे पुर्णिमाक प्रदीप्त आभा सन वस्त्रांचल मध्य सँ अपन ज्योत्सना केँ प्रसारित कएल तथा ओ नि:शंक भए बजलीह—"हे नाथ ! एहि प्रलापक मूलकारण समागमक तीव्र उत्कण्ठा थिक। सागर मे लीन भेनहारि बूँद कोना तौलल जाए सकैछ ? अनल पक्षी सन मोन निस्सीम गगन मध्य यद्यपि दूर दूर धरि उड़ितहुँ छैक तथापि बन्धन युक्त भेला सन्ता

निर्मुक्त नहि भए ओ पुनि अपन स्थान पर स्वतः अबैछ। हे तापस ! आत्मा तँ आकाश सन, निर्विकल्प, निश्चल, नित्य, शुद्ध एवं सर्वसाक्षी थिक । अतएव एहेन आत्मा मे द्वैताभावक सृजन भला कोना भए सकैछ ? एहि तरहक धारणाक आधार मात्र इष्टक अप्राप्ति तथा अनिष्टक आशंका थिक । सिन्दुरक स्थान मे काजर तथा कमलक अभिनव पुष्प नीमक दोना मे कथमपि नहि राखल जाइछ महामुनि !''

मेनकाक स्निग्ध केशराशि समस्त कलाक आलय तथा मुख-चन्द्रक विमल कान्ति दूधक धार सन मुनि केँ सुखद तँ प्रतीत भेल किन्तु ओ रेशमक कीड़ा सन जे स्वतः अपनहि तन्तुजाल मे अपना केँ वेष्टित करैछ विषयक निमित्त दुर्विमोच स्त्री रूपक पाश मे अपना केँ आबद्ध कए बजलाह—''हे प्रिये ! नदी जाबत समुद्र मे पूर्ण रूपेँ समा नहि जाइछ ताबतहि ओकरा अपन अहंगक अनुभूति रहैछ । प्रेमसागर मे मिललाक उपरान्त पुरुषक समग्र बेचैनी समाप्त भए जाइछ तथा ओकरा शान्ति एवं स्थिरताक उपलब्धि होइछ । हे मेनके ! अहाँक स्नेह-सागर मे हम तेना ने सरबोर छी जे जँ चित केँ पाथर बनबैत छी तँ शरीर संग नहि दए रोमाञ्चित भए उठैछ और जँ प्रेमालाप पर नियंत्रण करैत छी तँ दुष्ट मुँह मुस्कुरा उठैत अछि तथा नेत्र केँ जँ बन्धुक पुष्प सन अधर मणिक पान सँ वर्जन कैरत छिऐक तँ अहाँक पीयुषवेणी सन वाणी एवं उत्कृष्ट दृष्टि हमर हृदये केँ हरण कए लैछ। अतएव हे परम लावण्यमयी ! अपन सहज आचरण एवं सहज मार्ग सँ

आब अहाँ हमर चित्तक समग्र दोष केँ मुक्त एवं राग तत्व केँ निर्मल कए निर्वाण प्राप्तिक दिसि अग्रसर करू।''

मुनिक उर्पयुक्त कथा केँ सूनि संसारक वैभव विलासक सशक्त श्रृंखला सँ परिपूर्ण मेनका चुम्बक सन मुनिक लौहवत दृढ़ मोन केँ अपन दिसि आकृष्ट करबाक उपक्रम करैत नितान्त आर्द्र भए बजलीह—''हे तपस्वी ! काम मोनक प्रबल शक्ति थिक। प्रकृतितः मनुष्यक कामना वहिर्मुखी होइछ। अपन केन्द्र मे बैसि ओ इन्द्रिय द्वारक भीतर सँ बाहरक दिसि यद्यपि झँकैत रहैछ किन्तु जखन ओ इन्द्रिय केँ अन्तर्मुखी बनाए स्वतः आत्मतत्व मे लीन भए जाइछ तखनहि ओकरा एकमात्र सत्व तत्वक दर्शन होइछ। मनुष्य केँ आत्मतृप्ति वाह्य सांसारिक पदार्थ मे नहि भए स्वतः अपनहि अनुरंजन सँ होइछ जे प्रेमक बिना नहि भए सकैछ नाथ !''

मेनकाक रक्त-अधर परहक मधुर मुस्कानक धवलिमा लाल कपोलक श्वेत फल वा चमकैत मूँगाक मध्य मोती सन तथा ओकर बाँहि शिरीषक कुसुमो सँ अधिक सुकुमार मुनि केँ बूझि पड़लैन्ह। ओकर केशपाश निर्मल गगनक ओहि उच्चतम प्रदेश सन जतए तारागण झिलमिलाइछ; नेत्र हिम मे जटित नीलम तथा कपोल ओहि अरुणाभ धवल मेघ खण्ड सन जे उषाक मुख-मण्डल केँ अलंकृत करैछ तथा ओकर देहक निर्माण चमकैत मोती, लाल पद्मराग, श्वेत स्फटिक एवं नील नीलम सँ निर्मित सन हुनका प्रतीत भेलैन्ह। किछु कालक उपरान्त शान्ति केँ भंग करैत ओ

पुनि बजलाह—"हे मेनके ! समुद्र कें जतेक लहरि रहैछ ततबेक मानव मोनहुक दौड़ अछि। जँ मोन एकस्थ भए स्थिर भए जाइछ तँ सहजहि हीरा प्राप्त होइछ। किन्तु वासना तृप्तिक आकांक्षा करैछ तथा ओकर उपलब्धिक निमित्त मनुष्य सतत उन्मुख रहैछ। कामक आचारण जल सन होइछ। जाहि दिसि ढाल रहैछ ओम्हरे ओकर गति उन्मुख होइछ। जँ ओहि जलक मार्ग कें कोनहु बाँध सँ रोकल जाइछ तँ जलक प्रवाह अबरुद्ध भए ओ वा तँ अपन निमित्त नव मार्गक निर्माण करैछ वा बाँधक ऊपर सँ ओ प्रवाहित होइछ।"

मुनिक तर्कयुक्त वाणी कें सूनि मेनका अपन मुँखमण्डल सँ पुर्णिमाक चाँद कें, शरीरक कान्ति सँ सोनाक दीप्ति कें तथा दाँतक पंक्ति सँ तारा कें निराजित करैत बजलीह—"हे तपस्वी ! पदार्थमात्रक सुन्दरता ओकर स्वभावक अनुसार नहि भए प्रेक्षकक रुचिक अनुसार होइछ। नितान्त स्वरूपवती युवतीक मादक रूप नेना कें तँ कथमपि आकृष्ट नहिए करैछ स्वतः युवकक मोनो जँ ओकरा प्रेमक प्यास नहि रहैछ वा कोनो आन कारणे ओकर चित्त खिन्न जँ रहैछ तँ ओहो नारी-सौंदर्य सँ प्रभावित नहि होइछ। अतएव हे नाथ ! रूप कें समझबाक हेतु दृष्टिक आवश्यकता होइछ तथा ओ दृष्टि सरस हृदय एवं सुसंस्कृत मोने सँ प्राप्त भए सकैछ। अतएव प्रेमक आरम्भ ओहि भावना सँ होइछ जे प्रेमी कें प्रियतमक प्रति तेना ने आकृष्ट करैछ जे प्रेमी ओकरा मात्र अपन संपत्ति बनाए अनका नजरि सँ

प्रक्षिप्त रखबाक इच्छा तँ करैछ किन्तु जेना-जेना प्रेम परिपक्व भए जाइछ तहिना प्रेमी प्रियतमक ध्यान करैत स्वतः अपना कें ओकरा मे संलग्न कए दैछ। एवंक्रमें एहि अवस्था मे पदार्पणक उपरान्त बासनाक लोहा आत्मसमर्पणरूपी पारसक स्पर्श सँ प्रेमरूपी विशुद्ध सोना बनि जाइछ तथा ओकर प्रेम हास-परिहास तथा प्रेम-क्रीड़ाक परिधि सँ दूर प्रौढ़ता एवं गम्भीरता कें प्राप्त करैछ। ओहि प्रेम मे उन्माद, मादकता तथा मूर्छाक माधुर्य तँ रहैछ किन्तु समर्पण एवं परिष्कारक अभाव रहैछ। वासना आलम्बनक अपार्थिव संज्ञाक होइतहुँ ओ पूर्णमादक तथा अनियंत्रित रहैछ। प्रेमक मानसिक पद शारीरिक सन प्रधान नहि रहैछ तथा ओहि प्रेमक आरम्भ रूप-राग-जन्य आकर्षण सँ नहि भए काम द्वारा सपन्दित आकांक्षा सँ होइछ। हे स्वामी! जेना जल जल सँ तथा ज्योति ज्योति सँ मिलि तद्रूप भए जाइछ तहिना पुरुष-नारी परस्पर मिलि तदाकार होइछ एवं ओकर समस्त नाम उपाधि ओहि परम मे लीन भए परमात्मा-स्वरूप भए जाइछ तथा ओ स्वयंए अपना कें बूझि सकैछ तथा ओकर समग्र भ्रम, भय एवं त्रिगुणात्मिका प्रकृतिक विनाश भए जाइछ। एकर अतिरिक्त प्रियदर्शनता, विनोदशीलता, प्रज्ञा एवं प्रभा मे पुरुष स्त्रीक समता कथमपि नहि कए सकैछ। ओ खिन्न पतिक संताप कें हरि अपन आलाप सँ समग्र गृह मे आनन्द-सुमन कें बरसाबैछ। तदर्थ जेना वीणाक नाद कें सूनि मृग ओहि मे विस्मृत भए जाइछ तथा बगुला माछक दिसि एकटक तकैछ तहिना

हे महर्षि ! हमरा अधर मे अधर डालि निर्निमेष भाव सँ हमर रूप सुधाक पान करू ।''

तदुपरान्त मेनकाक उल्लसित यौवनक घनघोर संभोग, उत्कट रमण एवं उद्दाम रभस लालसाक समक्ष मुनिक समग्र तर्क, विवेक, संयम एवं धैर्य पराजित भए गेल तथा दुहू पुष्प मे सुगन्ध सन तथा दूध मे घृत सन परस्पर मिलि अनिर्वचनीय आनन्द मे निमग्न भए गेलाह तथा अरण्यक समग्र चेतन एवं अचेतन प्राणी दिव्य प्रेमक परिणामस्वरूप सौन्दर्य तथा आनन्द मे तरंगित होमए लागल ।

२

[इन्द्रक नन्दन कानन : तिलोत्तमा, उर्वशी एवं चित्रलेखाक पारस्परिक वार्त्तालाप।]

सहज आकर्षण एवं सहज सौंदर्य आत्माक सहज-आनन्द वृत्ति तथा सच्चिदानन्दक स्फुरण व्यापार थिक। मेनकाक जन्मजात लावण्य, स्वाभाविक अंग-कान्ति, अंजन रंजित चञ्चल नेत्र, तिरछी-चितवन तथा उन्नत उरोजक प्रपञ्च मे पड़ि विश्वामित्र स्वतः अपना कें बिसरि ओकरा अपन नेत्ररंजक एवं चित्तक आलय बूझए लगलाह। ओ मेनकाक तारुण्य विकास कें निर्निमेष भाव सँ तेना ने पान करए लगलाह जे ओ नित्य नूतनताक कारणे हुनक हृदयक भावनाक कें सतत उद्दीप्त करैत छल तथा हुनका ओकर अधर रूप आलाप मे विद्युत-प्रभाक, केशकलाप मे नागकन्याक नृत्यक तथा मुखमण्डल मे काननक चानक भ्रान्ति होइत छलैन्ह। एवंक्रमें अभिसार मे ओलोकनि एक दोसराक मौन कें अपना दिसि खींचैत एवं जीतैत अभिमान, तप एवं त्यागक मर्दन करैत आलाप-प्रलाप मे जड़ैत कोयलाक टुकड़ी सन अपन कालिमा कें प्रक्षिप्त करबाक निमित्त हँसैत समय बीतबैत वँ छलाह किन्तु इन्द्रक नन्दन काननक हृदय हृदयक निमित्त तरसैत छल जकरा समक्ष कोटिशः अभ्युत्थान एवं पतन हर घड़ी होइत रहैत छल, असंख्य मुनिगण अपन तपस्याक फल चरण पर अर्पित करैत रहैत छल, कटाक्षक आघात सँ त्रिभुवन-यौवन चंचल

भए जाइत छल तथा जकर दर्शन मात्रहि सँ पुरुषमात्रक रक्तक धार नाचि उठैत छल, ओकर अभाव स्वतः देवराजहु कें तँ खटकैत छल किन्तु आदेश तँ हुनकहि छल। अपन स्वार्थक निमित्त अमरावतीक अनुपम रत्न, रूपक निधि एवं स्रष्टाक उत्कृष्ट कृति कें महर्षि विश्वामित्रक तपस्या-भंगक आदेश जे प्रसारित कएल ! किन्तु रूप, यौवन, माधुरी, हाव-भाव, मुस्कान, बातचीत एवं कटाक्ष आदिक द्वारा हँसी-खेलक अभिनय मे अपन मर्मस्थलक गूंजन कें मानवक प्रेमक आवास मे प्रक्षिप्त कए की वस्तुतः ओ ठकल गेलीह ? प्रभात कें दुपहर मे परिणत भेलाक उपरान्त जखन तप्त पवन आगिक लपट सन तन कें डाहए लागल तखन पुनि ओ अपन गृह किएक नहि प्रत्यागमन कएलीह। जाबत एवंक्रमक पारस्परिक वार्त्तालाप चलितहि छल ताबतहि अपन लावण्यक ज्योत्सना सँ समस्त दिशा कें उद्भासित एवं सभहक नेत्र कें विस्मित करैत रम्भा पदार्पण करैत बजलीह—"हे सखि ! हाथी कामवश, बानर जीभक वश और सुग्गा सुखक निमित्त अपना कें तँ बन्धन मे दैछ किन्तु अप्सरा जे सतत स्वच्छन्द जीवन एवं उन्मुक्त यौवनक कांक्षा करैछ कोना मर्त्य मानवक प्रेम पाश मे आवद्ध भए पीतरिक गहना मे सोनाक पालीश सन अपना कें बूझि ऐंठैत अपन अमल यौवन कें व्यर्थ मे गमबैत अछि ?"

रम्भाक एवंक्रमक उपहासयुक्त बचन कें सूनि उर्वशी साकांक्ष भए बजलीह—"हे सखि ! की मेनकाक प्रति अहाँक एहि तरहक

कटु वचन थिक ? महर्षि विश्वामित्रक तेज, तप एवं क्रोध सँ जखन स्वयं देवराजे भयातुर छथि तँ एक अवला नारीक कोन कथा ? ई तँ ओएह मुनि थिकाह जे कुपित भए एक दोसर स्वर्ग तथा कतिपय अन्य नक्षत्रक नूतन सृष्टि कएलैन्ह। ओ तँ एहेन अद्भुत छथि जे अपन तेज सँ त्रिभुवन केँ डाहि सकैत छथि, पाएरक ठोकर सँ पृथ्वी केँ हिला सकैत छथि, महामेरु पर्वत केँ उठा कए फेकि सकैत छथि तथा समस्त दिसा केँ एकाकार कए सकैत छथि। हुनका मुँह मे आगि, नेत्र मे सूर्य-चन्द्रमा तथा जिह्वा मे स्वतः कालक निवास छैन्ह। तखन मेनका जँ ओहि महान् तेजस्वीक प्रेम-पाश मे आबद्ध भए गेलीह तँ एहि मे कोन आश्चर्य ?''

उर्वशीक उपर्युक्त कथा केँ सूनि देवरूपिणी तिलोत्तमा अपन शरीरक कान्ति केँ दमकबैत कामरूपिणी लक्ष्मी सन सभहक दृष्टि केँ अपना दिसि आकृष्ट करैत बजलीह—''हे सखि ! जँ मुनि एहेन छथि तँ अपन निमित्त एक दोसर मेनकाक सृजने ने किएक कए लैत छथि जे अपन जादू-टोना सँ ओहि बेचारीक मोन हरि सताए रहल छथिन्ह ?''

तिलोत्तमाक उपर्युक्त वाणी केँ सूनि उर्वशी मर्माहत भए बजलीह—''हे सखि ! अहाँ अपन रूप-सम्पत्ति एवं कार्य-कुशलता द्वारा सुन्द और उपसुन्द मे भने भेद-भाव केँ जागृत कए ओकरा लोकनि केँ विनाश कराओल किन्तु कौड़ी सँ की घोड़ा खरीदल जाइछ तथा चाननक भ्रम मे की लोक सीमरक लेप करैत अछि ?

सौन्दर्यक सार्थकता तँ प्रियक प्रेम-प्राप्तिएटा मे होइछ जकरा परख-बाक हेतु सलोनी सहृदयताक आवश्यकता होइछ। स्नेह-सहानुभूति मे सानल निगाह हर वस्तु केँ आर्द्र कए दैछ तथा भीतरक सरसता बाहरो केँ सराबोर कए दैछ। जँ भीतरक नयन नष्ट नहि भेल हो तँ नंदन कानन एवं करील कुंज मे, तिलोत्तमा एवं साधारण कन्या मे तथा आकाश गंगा एवं पहाड़ी सरिता मे की कोनो विशेष अन्तर छैक ? जँ मोन प्रसन्न अछि तँ बबूर कल्पवृक्ष और अमौजा अमरावती भए जाइछ।''

उर्वशीक एहितरहक कटु वचन केँ सूनि रम्भा उपहासक स्वर मे बजलीह—''हे सखि ! उर्वशीक विचार हुनकर अपन अनुभूतिक अभिव्यक्ति थिक जे राजहंसक पांति मे बैसि ओ कौआ सँ प्रेम कए गुलाब, केवड़ा तथा खसक इत्र केँ छोड़ि माटिक लेप पर निछावर भेलीह।''

रम्भाक उपर्युक्त वाणी केँ सूनि उर्वशी नितान्त नम्र भए बजलीह—''हे सखि ! सुन्दर वस्तु सँ सतत आनन्देक उपलब्धि होइछ। विशुद्ध सौन्दर्य प्रेमक समक्ष विषो अमृत भए जाइछ। अप्सरा खाहे उषाक उदय सन 'अनवगुंठिता' तथा 'अकुंठिता' रहउ एवं ओकर कटाक्षक आघात सँ त्रिभुवन-यौवन भने चंचल भए उठौह किन्तु माता, कन्या वा बधू नहि होयब ओकरा हेतु गौरवकवस्तु कथमपि नहि भए सकैछ। ओ तँ मोहिनी तथा समाधिक निमित्त विघ्नस्वरूपा स्वर्ग-वेश्या मात्र थिक। अतएव ओकर सर्वाङ्ग निखिल-तयनक आघात सँ कानत ! एवंक्रमेँ

सौन्दर्यक उदय सतत मानवक चित्तहिटा मे होइछ जे स्वर्गक उदयाचलक बासी नहि भए मर्त्यक अस्ताचल तथा उभयाचलक बासी थिक। अतः हे उर्वशी ! स्वर्ग सुधापानक निमित्त भने सुखक स्थान रहउ किन्तु कर्त्तव्य भूमि तँ मर्त्यभूमिए थिक जकरा मातृभूमिक गौरव प्राप्त छैक।"

उर्वशीक तथ्यपूर्ण वाणी केँ सूनि तिलोत्तमा पुनि उपहासक मुद्रा मे बजलीह—"हे सखि स्वर्ण-आभूषण मे जड़बाक योग्य मणि केँ जँ काँच मे जड़ि देल जाए तँ ओ शोभायमान नहि भए जड़निहारक निन्दाक निमित्त होइछ। हे उर्वशी ! वृन्तहीन पुष्प सन अप्सरा स्वतः विकसित भए स्वर्गक उदयाचलक मूर्त्तिमती उषसी थिक जकर तनुक तनिमा जगतक अश्रुधारा सँ धोल जाइछ तथा पगचिन्ह त्रिलोकक हृदयक रक्त सँ अंकित होइछ। ई तरु-लता-पुष्प सँ भरल तथा गिरि-नदी-सागर सँ समन्वित पृथ्वी नम्र देह तथा मुक्त प्राण सँ आकाशक दिसि निर्विकार भाव सँ तकैछ और आकाश मेघमालाक संग इजोत एवं अंधकार केँ लए पृथ्वीक हृदय पर निःशंक रूप सँ पड़ल अछि। उपर महाशून्य तथा नीचा मे धरातल अछि। महाशून्य देवताक तथा धरातल मानवक निवास स्थल थिक। धरातल पर भूख अछि, हृदय अछि और हमरा लोकनि सुधाक अन्वेषण मे दत्तचित छी। धरातल पर मृत्युक आधिपत्य अछि और हम अमर जीवनक काँक्षा करैत छी। धरा पर दुख अछि एवं ओहि सँ बचबाक उपाय भ्रान्ति थिक। स्वर्ग मे सुख, उद्भ्रान्त यौवन एवं रभसपूर्ण

स्वच्छन्द जीवन अछि। की मेनका केँ एहि सभहक कोनो ज्ञान नहि छैक ?''

तिलोत्तमाक तर्कपूर्ण कथा केँ सूनि उर्वशी स्नेहयुक्त वाणी मे बजलीह—"हे त्रिलोत्तमे ! एकहि सोनाक बनल आभूषण विविध आकारक भेला सन्ता पृथक-पृथक तँ प्रतीत होइछ किन्तु मूलतः ओ सभकेँ सभ एकहि धातुक रूप थिक। एहि प्रकारेँ सभ भूत मे एकहि आत्मा सन्निहित रहैछ। तदर्थ निष्काम कर्म मे अनुरक्त भए सभ भूत मे एकहि आत्माक भावना केँ लए कर्त्तव्यक पालन कएल जाइछ।

धरा और स्वर्ग प्रकृतिक एके आँचर मे लेपटाएल अछि। वृक्ष, नदी एवं नारीक नाम मे अन्तर तँ अछि किन्तु एतए-ओतए एके माधुरी बहैत अछि। जाहि चेतन तत्व सँ प्राणीमात्रक संचार होइछ ओहि सँ प्रकृतियहु स्पन्दनशील होइछ। ओ जड़ नहि रहि चैतन्यक हृत-कम्पन सँ युक्त रहैछ। सूर्य-चन्द्र, पृथ्वी, जल, अम्बर आदि भगवान शंकरेक रूप तथा ज्योति केँ विकीर्ण करैत हुनकर प्रत्यक्ष विग्रह स्वरूप थिक तथा जल, थल, अग्नि, पवन सभ मे हुनकहि दृष्टि सन्निहित अछि। तदर्थ प्रकृतिक प्रत्येक रूप प्रीतिकर एवं प्राणवन्त अछि। ज्ञानी एवं प्रेमी एहि चैतन्य एवं स्नेहसिक्त रूपक अवलोकन करैत अपन आत्मा केँ तुष्ट करैछ। अतएव स्वर्ग और धरा मे भेद-भावक प्रतीति नितान्त भ्रामक तँ अछिए संगहि स्वर्ग जँ देवताक वैभव-भूमि थिक तँ धरा प्रकृतिक लीलाभूमि थिक। मणि-माणिक्यक

नगरी अमरावती मे जँ हीरा-मोतीक प्रधानता छैक तँ धरातलक रमणी षड्ऋतुक सुमन सँ अपन साज-शृंगार करैत सतत सरसैत रहैछ। शरतक कमल ओकर हाथक लीलारविन्दु होइछ, हेमन्तक बालकुन्द सँ ओ अलक केँ, शिशिरक लोध्र पुष्पक पीयर पराग सँ मुँह केँ, वसंतक कुरवकक नव पुष्प सँ वेणी केँ, गर्मीक सिरिसक सुकुमार फूल सँ कान केँ तथा पावसक कदम्ब-फूल सँ अपन सिंउथ केँ सजाए स्वर्गक अप्सरा केँ निराजित करैत अछि।

हे सखि! स्वर्गक भवन भने स्फटिक मणि सँ सर्वत्र जटित रहउ किन्तु भूतलक भवनक अटारी पर जखन ताराक परिछाही पड़ैछ तँ प्रतीत होइछ जे ओतए फूल झिलमिलाइत अछि। स्वर्ग मे रत्नक ढेरि, मन्दाकिनीक सोनाक सिकता, कल्पवृक्षक मधु-वर्षण तथा झूलैत चन्द्रकान्त मणि सँ जल-कण भने बरसउ किन्तु धरातलक कमल, कदली तथा वाल मंदारक समक्ष ओकर कोन स्थान भए सकैछ? अतएव कलाक सौन्दर्य नित्यानन्दक लोक तँ भूतले थिक।''

उर्वशीक उपर्युक्त विचार केँ सूनि रम्भा प्रत्युत्तर दैत बजलीह—''हे सखि! पक्ष्मल, आयत तथा कजरोर नयन तँ भूतलक सुन्दरियहु केँ छैन्ह तखन महर्षि मेनकाक मुखमण्डल केँ चन्द्रमा बूझि किएक कुसुमाञ्जलि सहित अर्घ प्रदान कएलैन्ह? कतेक आश्चर्यक विषय थिक जे पकवानक स्वादक जाँच कौआक द्वारा कएल जाइछ। अप्सराक अंगक सुकुमारताक समक्ष मालती, चन्द्रकला एवं कदली ककरा कठोर नहि बूझि पड़ैछ?

हे उर्वशी ! तृष्णा सँ युक्त आन्हर चाकर उन्नतिक निमित्त अपन स्वामीक समक्ष झुकैछ तथा सम्पत्तिक रक्षाक निमित्त पहरा तँ दैछ किन्तु ओ कहाँ धरि अपन कार्य केँ कए सकैत अछि ? मेनका केँ तिरछी, कुंचित, उन्मुख, उल्लसित, भाव भरल, टेढ़, सस्मित, कम्पित, उद्वर्तित, विखरल, विकसित, तरंगित एवं सजल चितवन यद्यपि एकेटा छैक किन्तु शृंगार रस मे सरावोर भेला सन्ता ओकर गुण एवं व्यापार अनेक अछि। अतएव आश्चर्य तँ अहि हेतु अछि जे ओ यौवने मे आभूषण केँ त्यागि बुढ़ापाक वल्कल केँ किएक धारण कएलक ? विमल कुल, सुन्दर शरीर, विशद बुद्धि, विपुल बाहुबल अपार समृद्धि तथा अखण्ड प्रभुते तँ सहज सुन्दर पदार्थ थिक जे नारी हृदय के हरि लैछ किन्तु मेनका तँ कमल रहित पोखड़िक सेवन कए रहलीह आछि जे राग सँ भरल रहितहुँ महर्षि केँ की ओ कथमपि अनुरक्त कए सकतीह ?"

रम्भाक स्नेहयुक्त वचन केँ सूनि उर्वशी सांत्वनापूर्ण वाणी मे बजलीह—"हे रम्भे ! मनुष्यक उदारता एवं महानताक कारण ओकर कुल नहि भए अलौकिक चरित्र होइछ। विनयक बिना लक्ष्मी तथा चन्द्रमाक बिना रातिक शोभा नहि होइछ। जे कमलिनी चन्द्र बिम्ब केँ नहि पान कएल ओकर जन्म निरर्थक थिक। जँ नारीक मोन कोनो पुरुष मे रमि जाइछ तँ ओकरा वर्षा-विहारिक कोनो पतो धरि नहि चलैछ तथा मदमातल रजनी-गन्धाक सौरभो धरि नहि लगैत छैक। जेना नदी अपन नाम, रूप केँ छोड़ि समुद्र मे मिलि एकाकार भए जाइछ तहिना

नारी पुरुषक संग मिलि दुख-सन्ताप, कारी-गोर, तथा युवक-वृद्धक भावना सँ रहित भए आनन्द स्वरूप भए शब्द एवं अर्थ सन एकरूप भए जाइछ।

हे सखि ! एहने धर्मयुक्त प्रेमहिक तँ लोक अभिनन्दन करैछ तथा देवता एवं ऋषिगणो ओकरा शाप आदिक द्वारा बाधक नहि भए ओकर सहायके बनैत छथि। हे सखि ! जकरा प्रेम रहैछ सएहटा तँ प्रिय केँ चिन्हैछ तथा ओकरहिटा ओ प्यार करैछ। स्नेहहीन नारीक समग्र साज-शृङ्गार अनावश्यक थिक। ओ नारी धन्य थिक जे तन सँ तँ अपन स्वामीक सेवा करैछ और मोन सँ अपन प्रिय मे एकान्त भाव सँ अनुरक्त भए प्रेम-रसक पान करैत अपन जीवन बितबैत अछि।''

उर्वशीक कथा केँ सूनि तिलोत्तमा तरल विद्युत्प्रभा सन अपन जाज्वल्यमान रूप सँ समस्त दिसा केँ आलोकित करैत अत्यन्त आर्द्र भए बजलीह—''हे सखि ! नैसर्गिक सौन्दर्यक रमणी कृत्रिम ऐश्वर्यक दिसि किएक आकर्षित भेलीह ? अप्सरा तँ दोसरा केँ रञ्जन करैछ स्वतः रञ्जित नहि होइछ तथा ओ तँ दोसराक हृदय हरण करैछ स्वतः अपन हृदय केँ तँ नहि दैछ तखन मेनका मेघमाला तथा शरदक चन्द्रमा सन स्वच्छन्द भए बिचरब केँ त्यागि मर्त्य मानवक दासता केँ किएक स्वीकार कएलीह ? हे उर्वशी ! विषाद धैर्य केँ, यौवनमद विनय केँ तथा कामदेव लाज केँ अपहरण करैछ तखन पुनि एकान्तपक्ष निर्णय केनहार ओहि महर्षि केँ आब बाँचले की छैन्ह जकरा ओ एहि कान्तिमती

केँ समर्पण करथिन्ह ? जकरा हृदय मे शक्ति नहि ओकर शस्त्र कोन काजक ?''

तिलोत्तमाक उपर्युक्त वाणी केँ सूनि उर्वशी अप्रतिभ सन होइत बजलीह—''हे तिलोत्तमे ! समीपक एक हंस सँ जे सरोवरक शोभा होइछ से अनेक बेंग सँ कथमपि नहि होइछ। प्रेम मे आसक्त रमणी कुसियारक पोर सन रसवती होइछ जकरा मात्र तीन वस्तु—कलह, काजर तथा सिन्दुरे टा प्रिय होइछ। विषयक अनुभवक बिना ओकर तीव्रताक ज्ञान कोना भए सकैछ ? प्रेमक वास्तविक अनुभूति हृदयक अन्तःप्रदेश मे गुँजैत-गुँजैत प्रीतमक समीप जेबाक तीव्र लालसा मे नारी-हृदयक गुप्तसाधना सतत जाग्रत रहैछ। प्रेम नारीक परिपाटी, प्रियमिलन ओकर लक्ष्य तथा विश्वक प्रत्येक अणु मे अपन जीवनकान्तक रूप-माधुरी केँ देखि आनन्द सँ पुलकित भए आत्मविस्मृति सँ ओकर अधरक रस पीब एकान्त उद्देश्य थिक जे आत्म-समर्पणक बिना कथमपि नहि भए सकैछ। हे तिलोत्तमे ! समर्पण तँ नारी हृदयक एकमात्र स्वाभाविक मधुमती धार थिक जे सहजहिँ उत्पन्न होइछ तथा हृदयक हाहाकार एवं अतृप्त ज्वालाक रूप मे शीतलताक निमित्त अपन पतिक चरण कमल केँ पखारैत रहैछ।

हे सखि ! एवंक्रमक प्रेम केँ पाबि नारी ने तँ कोनो वस्तुक इच्छा करैछ वा ने शोक एवं द्वेष करैछ वा ने ओकरा विषय भोगक प्राप्ति मे उत्साहे रहैछ। ओकरा अपन प्रियतमक अंग सँ अंग एवं अधर सँ अधर मिलेबाक तँ कोन

कथा ओ अपन प्रियतमक समग्र राति मुँह निहारिते रहि जाइछ।

हे तिलोत्तमे ! नारी-पुरुषक प्रेम एक भावना मात्र नहि भए ओ ओ सत्य एवं आनन्द थिक जे प्रत्येक वस्तुक निर्माणिक मूल स्रोत होइछ तथा ओ पूर्ण चेतनताक ओ स्वच्छ श्वेत किरण थिक जे ब्रह्म सँ उद्‌भूत होइछ। अपन चेतनता केँ प्रेमक उच्चतम शिखर धरि लए एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे एहि प्रेमाप्त चेतनता केँ विस्तार कएलाक उपरान्ते प्रेमी असीम आनन्द मे एकात्मता केँ प्राप्त कए सकैत अछि। मात्र प्रेमेटा एक एहेन क्षेत्र थिक जतए एकत्व एवं द्वियत्वक विरोध भाव नहि रहैछ। प्रेम स्वयं एक संग अनेक एवं एक रूप मे रहैछ। ओ एक ऐहेन यज्ञ थिक जे ओहि मे आदान तथा प्रदान समवाय भाव सँ सम्बद्ध भए ससीम एवं असीम केँ एकाकार कए दैछ। आनन्दक प्रतीति तखनहि तँ होइछ जखन मनुष्य अपन आत्मा केँ जगत सँ तथा जगतक आत्मा केँ विराटक आत्मा सँ एकतत्वक अनुभव करैछ।

हे सखि ! एवंक्रमक प्रेम आदान-प्रदानक वस्तु नहि भए नित्य, सुन्दर, एकरस एवं एकान्तिक आनन्दप्रद थिक। प्रेमीक मनोवृत्ति तेहेन ने तीव्र होइछ जे प्रेमीक समग्र जीवन एक निष्ठताक साँच मे ढलि जाइछ तथा आठो पहर प्रेमक नशा मे ओ मातल रहैछ। एहि अवस्था मे ओकरा अपन तथा आनक ज्ञान कोना भए सकैछ ?"

उर्वशीक उपर्युक्त बचन कें सूनि रम्भा निराश भए बजलीह— "हे सखि ! कन्दर्प ज्वर सँ पीड़ित क्षणिक विरहु मे जलविहीन मीन सन तड़पनिहारि ओ कोमलांगीक की इएह इच्छा छैक जे भादवक वर्षा सन सतत ओ अपन नेत्र कें बरसबिते रहए तथा हृदय पर प्रेमक उमड़ैत घटा सँ ओहि कान्तिहीन, नीरस, चोकड़ल कपोल मुनिक प्रेमालापक कथा सुनैत ओकरा शरीर मे उबटन लगबैत अपन रूप एवं लावण्य कें गलबैत रहए ? हे उर्वशी ! मालती तथा कदम्ब, नीलोत्पल एवं कुमुद, मयूर एवं चातक तथा मेघ एवं विद्युत भने भूतल कें अभिराम सौन्दर्य सँ परिपूर्ण करउ किन्तु मर्त्य तँ आखिर नश्वर थिक जे सतत स्वर्गहिक कांक्षा करैछ तखन ओहि सुकेशीक द्वारा कपास कें औंटि चीर बुनबाक कोन तात्पर्य भए सकैछ ?" प्रेमक परिणाम तँ मातृत्व मे परिणत भए जाइछ जे अप्सराक निमित्त अभिशाप होइछ। की मेनका एहि दुरन्त दारुण कें सहि सकतीह ?"

रम्भाक प्रश्नक उत्तर दैत उर्वशी निःशंक भए बजलीह— "हे सखि ! विश्वक प्रत्येक कण मे शिवतत्व परिव्याप्त अछि। विश्व वीणा सँ आनन्दक रागिनी निरन्तर बजैत रहैछ। लता-बनस्पति, सरिता-समुद्र, पशु-पक्षी, नर-नारी आदि ओहि वीणाक अगणित तार थिक जे सभके सभ समवेत स्वर सँ ओहि आनन्द भैरवी मे सतत योगदान दैछ। सौन्दर्य एवं आनन्दक मधु सँ प्रकृतिक अणु-परमाणु सम्बद्ध एवं चेतन-अचेतन प्रकृति दिव्य

प्रेमक सूत्र मे आबद्ध अछि। द्वैत वा पाप-पुण्यक बोध साधारण धरातल पर होइछ। ऊच्च स्तर पर आनन्दमय कोष मे आबि ई द्वन्द्व समाप्त भए जाइछ। ई सम्पूर्ण विश्व सचेतन, समग्र, अखण्ड एवं एक अछि। धरती सुख-सौन्दर्य एवं भोग-ऐश्वर्य सँ तरंगित अछि। कमल, जूही, बेली, केवला, कदम्ब, करैया, भालसरी, मन्दार आदि पुष्पक सौरभ केँ पवन मुक्त दान करैछ। नदी अपन कलकल ध्वनि सँ प्रेमक गीत गबैछ तथा मेघ ओकरा प्रेमक प्रत्युत्तर दैछ। प्रकृति एवं पुरुषक गाढ़ आलिंगने तँ अर्धनारीश्वर थिकाह।

हे रम्भे! श्रृङ्गारिक सुख हेय नहि भए सृष्टिक विकासक कारण थिक। संसारक विहित भोगक उपभोग वर्जित नहि भए प्रिय थिक अवश्य किन्तु श्रेयक मार्ग प्रेमक आँगन सँ निःसृत होइछ। धर्मविहित प्रेम वरेण्य थिक। मानस मे कामक असमय क्षोभक उत्पत्ति एवं अनुचित मार्ग सँ वासनाक पूर्त्तिक प्रयास पाप थिक तथा धर्म बन्धन मे आबद्ध कामे सँ तँ भावीमानवक उत्पत्ति एवं लोक-कल्याण साधित होइछ। हे सखि! स्थूल दृष्टि जगत मध्य जड़ चेतनक भेद करैछ। प्रेमार्द्र दृष्टि मे चेतन अचेतनक अन्तर नहि पाओल जाइछ। प्रेम व्यक्ति केँ विराट बनबैछ। विराट मे रूपान्तरित होयतहि व्यक्ति केँ 'मधुवाता ऋतायतेक' अनुभूति जँ होइछ तँ समग्र दिशा एवं जीव-जन्तु ओकर मित्र भए जाइछ। अतएव प्रेम चेतनाक सर्वत्र व्याप्ति थिक।

हे सखि ! एहि-विश्व मे के सतत सुखी रहल ? क्षीर-समुद्र सँ उत्पन्न अमृतमय चन्द्रमहुँ केँ तँ राहुक ग्रास बनए पड़ैछ तखन मानव जीवन जे वस्तुतः "साँझ-उषाक-आँगन" थिक सुख-दुख दुहूक उपभोगक निमित्ते तँ अछि । तदर्थ विपत्तिक मध्य मानव सतत आशा सँ जीबैछ जे नर-नारी केँ फूल सन सुकुमार प्रेमपूर्ण हृदय केँ अकस्मात विखरबा सँ अवरुद्ध करैछ ।

हे रम्भे ! अप्सराक दिव्य रूप एवं उन्मुक्त यौवनक पान जे साधारणतः देवतहु केँ दुर्लभ अछि अखिल ब्रह्माण्ड मे सनातन नियमक रूप मे परिव्याप्त ऋतक कोनो ऋषिए तँ कए सकैछ ! अणु-परमाणु मे तरंगित चेतना रूप चित्तक कोनो महाप्राणे तँ भावन कए सकैछ तथा ओहि भावक मधु केँ वाणीक रूप मे व्यञ्जित कोनो स्वयंभूएक द्वारा तँ भए सकैछ ! अतएव प्रणय एवं सौन्दर्य मानव केँ फूलक देशक बासी बनबैछ तथा विषधरक फणो प्रेमरस मे सराबोर भए अमृते उगलैछ ।"

लहरक थापर सँ किलकिलाइत हंसक पाँति सन करधनीक झंकार सँ समस्त दिशा केँ झनकबैत एवं नदीक प्रवाह सन अटपट चालिक मस्ती केँ प्रकट करैत ओ लोकनि जाबत वार्त्ता कइए रहल छलीह ताबतहि मणि, मोती एवं स्वर्णक अलंकार सँ अलंकृत प्रस्फुटित कमलसन उत्फुल्ल एवं लता, त्रियामा तथा सरिता तीनहुक सौन्दर्य सँ युक्त चित्रलेखा पदार्पण करैत बजलीह---"हे सखि ! जखन कामक रमणीय हिलोर शान्त भए जाइछ तँ प्रेमक सरोवर मे वात्सल्य-कमलक उदय होइछ ।

चिरयौवना मेनका श्रोणिभार सँ अलसगमना, स्वाभाविक कान्ति एवं शालीनता सँ रहित भए पत्रहीन लतासन प्रतीत भए रहलीह अछि।"

तर्क-वितर्क, संकल्प-विकल्प एवं लाभ-हानिक विचार विमर्श करैत भविष्यक सृजन, अतीतक रमण तथा वर्त्तमानक चिंता मे कातर उषा सन विभासिता, कौमुदी सन कान्तिमति एवं काम-शिखा सन मोहक देव-रमणी लोकनि चित्रलेखाक द्वारा मेनकाक वात्सल्य-कमलक उदयक प्रसंग मे बूझि विसमित, व्यथित एवं उपहासित भए अपन उत्कट प्रेम एवं उद्दाम रभस लालसा केँ अपन आँचरक एक कोर मे समेटि दोसर कोर सँ अपन मुखमण्डल केँ प्रक्षिप्त कए द्रुतगति सँ देवराजक नृत्यशाला दिसि अग्रसर भेलीह।

●●

३

[तपोभूमि : विश्वामित्र एवं मेनकाक प्रेमालाप]

भूतलक कानन मे विश्वामित्र मेनकाक संग अभिसार मे कतिपय अहोरात्र केँ बितौलैन्ह। ओ ओकर लावण्य-पयोधि मे तेहेन ने निमग्न भए गेलाह जे हुनका ओकरा छोड़ि आन कोनहु टा वस्तु लक्षित नहि होइत छल। मेनकाक कुसुम सन कोमल कलेवर एवं जूहीक कली सन आलाप हुनका प्रतिक्षण उपभोगक आमंत्रण दैत छल तथा ओ ओकरा अपना अंक मे भरि प्रियालाप सँ मनुहार करैत बजलाह—"हे प्रिये! जखन अहाँ प्रथमतः द्रुमच्छाया सँ प्रकट भेलहु तँ प्रतीत भेल जे जेना विषधरक मुँह सँ मणि निःसृत भेल हो वा स्वतः चाँदनिए स्वर्णक प्रतिमा मे निर्मित भए गेल हो। अहाँक विरल वस्त्र मध्य झिलमिलाइत अंग-प्रत्यंग उत्फुल्ल कमल सन बूझि पड़ैत छल तथा नेत्र मे मादकता एवं अंग मे नर शोणित मे आगि लगेबाक लास्यक लहरि छल। हे सुन्दरि! अहाँ अवश्ये कोनो कल्पलताक शाखा केँ चीरि निःसृत भेलहुँ वा कोनो जलदक पटल हटाए उषा तुल्य प्रकट भेल होयब। हे शुभगे! आहाँक ई दुहू नेत्र कोनो अपर लोकक ऐना, सुरभित कुसुम कुंज सन दुहू उरोज तथा मधुर आलाप कोनो दुरन्त किरणक विभा थिक। वस्तुतः अहाँ सन अपूर्व रूप त्रिभुवन मे कतहु अन्यत्र नहि पाओल जाइछ।"

विश्वामित्रक एवंक्रमक कथा सँ जे नारीक रूप माधुरीक प्रशंसा मे छल मेनका आनन्द निमग्न भए अर्धचेत पुलकातिरेक मे मन्द-मन्द बहैत एवं बिहुँसैत बजलीह—"हे स्वामी ! हम तँ अचेतन प्राणक मात्र एक प्रभा छी तथा चेतनाक जल मे रूप, रंग, रस, गन्ध-पूर्ण साकार कमल छी। हम नाम-गोत्र सँ रहित एक फूल छी, अम्बर मे उड़ैत इतिवृत्तहीन मुक्त आनन्द-शिखा एवं सौन्दर्य-चेतनाक एक तरङ्ग छी। हे प्रभु ! हम ने तँ तलातल अतल-बितल-पाताल केँ फोड़ि निःसृत भेल सिन्धुक सुता छी वा ने हम ताराक पुष्प सँ पुलकित गगनक लता छी। हम तँ मात्र एक अप्सरा छी जे अपन लावण्य माधुरी सँ विष-धरक फणहु पर अमृतक वर्षा करैत छी तथा पैघ-पैघ अदम्य वलशालीयहुक बल केँ मृणाल तार सन तार-तार कए दैत छी। हमरा समक्ष मत्त गजराज, केसरी, सरभ एवं शार्दुल सभ केँ सभ पोसा पशु सन विनम्र भए जाइछ तथा महान शूरवीरहु हमरा पर आशक्त भए जाइछ। पाषाण-प्रतिमा मे पीन-स्तनी, मुष्टि-मध्यमा, मदिर-लोचना एवं कामलोलुपता नारी हमहीं तँ छी। भू-नभ मे व्याप्त सम्पूर्ण संगीत हमरहि निस्सीम प्रणयक तथा समस्त कविताक गीत हमरहि त्रयलोक विजयक तँ थिक। ताराक झिलमिल छाह मे फूलक नाव हमहीं तँ बहबैत छी। हमहीं तँ नैश प्रभा छी तथा सभहक भीतर निशक कल्पना केँ जगबैत छी।

हे महर्षि ! नारी-जगत वस्तुतः हमरहि रूप थिक तथा हम

देश-काल सँ पृथक चिरन्तन नारी, आत्मतंत्र यौवनक नित्य नवीन प्रभा तथा अमर रूपसी चिर युवती सुकुमारि छी।"

मेनकाक एहि कथा केँ सूनि महर्षि व्यथित भए बजलाह—"नहि, नहि, अहाँ एक नारी नहि, हमर चिरन्तन प्रिया छी। अतीत मे अहाँ हमरहि छलहुँ तथा अगतहु मे अहाँ हमरहि रहब। हे मेनके! अहाँक गति, भंगिमा, मधुर स्वर, किलकिंचित एवं अपार रूपसागर हमरा सम्मोहित करैत रहैछ तथा प्रवाल सन अधरक चुम्बन प्राणक पाटल केँ तँ फोलि दैछ किन्तु ओकर दाह न्यून नहि भए दुरन्ते होइत अछि। हे प्रिये! हम तँ किंकर्त्तव्य-विमूढ़ छी तथा हमर बुद्धि कोनो काज नहि करैत अछि।"

महर्षिक संशय युक्त कथा केँ सूनि मेनका सरल नारीक स्वभावानुसार बजलीह—"हे नाथ! बुद्धि तँ सविकल्पा थिक जे मनुष्यक कर्त्तव्य केँ निर्धारित करैछ। नर-नारीक संयोग अन्तरात्मा केँ उर्ध्वगमनक प्रेरणा तँ दैछ किन्तु सभय प्रेम एहि मे बाधक भए जाइछ। संयोगक अन्तिम परिणाम वियोगे तँ होइछ। अतः अहाँ अपन अन्तस् मे देखू जतए ओकर समाधान अछि। वस्तुतः हे महर्षि! कामिनीक कान्ति की ककरहु शान्ति देलकैक अछि? ईश्वराराधन एवं निदिध्यासने मे तँ मानवक कल्याण पाओल जाइछ। हे प्रभु! हम तँ पतिव्रता नारी नहि भए एक अप्सरा छी जे मात्र श्रवणे सँ स्वर माधुरीक पान तथा रूपक भोग केवल तृष्णा भरल नयने सँ करैछ। अतः कोनो अनिर्वचनीय क्षुधा सँ पीड़ित भेलहुँ सन्ता परिरम्भ-पाश मे आबद्ध

नहि होइत छी। अप्सराक उत्पत्तिए तँ सभहक मनोविनोदक निमित्त भेल अछि। कखनहुँ तँ ओ कोनो देवताक आलिङ्गन करैत अछि आ कखनहुँ कोनो नरक। ओकरा हेतु ई परिरम्भण मोनक रश्मि-रमण तथा गन्धक जगत मे दू प्राणक विमुक्त भ्रमण थिक। अप्सरा समग्र प्रेम-प्रक्रिया केँ रसमय विनोद एवं भावक विकास बुझैत अछि किएक तँ ओ केवल गीत-नाद एवं सौरभ-सुभाष सँ सभहक मोन केँ रंजन कए पवन मे उन्मुक्त विहारक उत्कण्ठिता होइछ।''

मेनकाक बचन केँ सूनि मुनि नितान्त मर्माहत भए बजलाह— ''हे मेनके! मनुष्यक इच्छा किछु होइछ और दैवक किछु आने। पीयूषक बृक्ष मे विषक फल फड़ैछ। ई तँ दैवहिक ने विचित्र गति थिक। अहाँ प्रपञ्च सँ अपन शरीर केँ तँ समर्पित कएल किन्तु हृदय केँ नहि।''

विश्वामित्रक उपर्युक्त वाणी केँ सूनि मेनका अपन विचारक पुष्टि मे बजलीह—''हे नाथ! स्वार्थक वश भए मनुष्य प्रेम एवं विश्वास केँ बिसरि जखन अविचारी भए जाइछ तँ प्रेम केँ नियंत्रणक आवश्यकता होइछ। वस्तुतः रूप एवं गुणक स्वार्थ मे मदान्ध मनुष्यक नारी-जाति पर अधिकार नरक मलिन एवं विहीन प्रवृत्तिक द्योतक तथा संस्कृतिक कुत्सित कलंक थिक जे मनुष्य केँ विनाशक दिसि अग्रसर करैछ। हे महर्षि! जखन बुद्धि मे ममता अबैछ तखनहि दुखक प्रादुर्भाव होइछ। बिलारि जखन मूस केँ खाइछ तँ मोन दुखी नहि होइछ किन्तु जँ ओ दूध पीबि लैछ तँ

मोन मे दुखक उद्रेक होइछ। तदर्थं भूत सँ भूतक उत्पीड़ित होएबे तँ सुख-दुखक कारण स्वरूप थिक। अतएव हे महामुनि ! ई हमर थिक इएह तँ दुखक मूल थिक। संसार मे कर्मक एक गोट महावृक्ष अछि। अहंभाव सँ ओकर अंकुर फूटैछ, ममता ओकर डारि, घर-द्वार ओकर शाखा, स्त्री-पुत्र आदि ओकर पल्लव तथा धन-धान्य ओकर पात थिक। ओ दीर्घकाल तक जँ बढ़ैछ तँ पाप-पुण्यक फूल फूलाइछ तथा सुख-दुखक फल फड़ैछ। ई वृक्ष मुक्तिक पथ केँ रोकि केँ बढ़ैत अछि। संसारक मार्ग मे थाकि जे ओकर छाह मे आश्रय लैछ ओकरा अत्यधिक आनन्द कतए ? किन्तु जे व्यक्ति सत्संग रूपी पाथर पर बैसि अपन ज्ञान रूपी कोदारि सँ ओहि ममता रूपी वृक्ष केँ काटैछ ओ ओहि मार्ग पर अग्रसर भए ओहि ब्रह्मवन मे पहुँचैछ जकर छाह शीतल अछि तथा जतए धूरा एवं काँटक अभाव पाओल जाइछ। प्रज्ञाशील व्यक्ति ओतए परम शान्तिक अनुभव करैछ। हे स्वामी ! स्थूल भूत, इन्द्रिय, तन्मात्रा तथा अन्तःकरण एहि सभ सँ भिन्न हमर एवं अहाँक स्वरूप थिक।''

मेनकाक बचन केँ सूनि विश्वामित्र केँ यद्यपि विवेकक भान भेलैन्ह किन्तु हुनकर मोन विषय मे तेना ने रमल छलैन्ह जे ओ सत्वर बाजि उठलाह—''हे मेनके ! नारीक बिना पुरुषक जीवन शून्य सन होइछ। वेद मे जकरा ब्रह्म कहल गेल अछि सएह तँ परमात्मिका शक्ति थिक जे विष्णु मे सात्विकी, ब्रह्मा मे राजसी तथा शिव मे तामसी शक्तिक निरूपण करैछ।

निर्गुण शक्तिए तँ ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवक रूप मे सगुण रूप धारण करैछ।"

मुनिक उपर्युक्त कथाक उत्तर दैत मेनका पुनि बजलीह—"हे स्वामी ! ज्ञान वा विवेकक प्रतीक दिन तथा अज्ञान वा मोहक प्रतीक राति थिक। ज्ञानक द्वारा अज्ञान सँ मुक्त होयबे तँ ब्रह्मक संग एकत्व एवं प्रकृतिक गुण सँ छुटबाक उपाय थिक। संसार मे दुखक अनुभवे तँ ज्ञानक दिसि खींचि कए लए जाइछ। ममता एवं आशक्तिए तँ दुख थिक। अतएव मोक्षार्थी सतत स्त्रीक संगक त्याग करैछ।"

मेनकाक उपर्युक्त कथा सँ खिन्न होइत मुनि आवेश मे बजलाह—"हे सुकेशी ! मनुष्यक धर्म, अर्थ एवं कामक प्रबल कारण ओकर पत्निए होइछ तथा मनुष्य स्त्री केँ आत्मानुकूल बनेबाक निमित्त ओकरा मे मैत्रीभावक आरोपन तँ करितहि अछि संगहि कोन व्यक्ति केँ मल्लिकाक रस पानक उपरान्त भ्रमरीक संगीत केँ तथा दक्षिण-पवन सँ प्रेरित वञ्जुल लताक मञ्जरिक नृत्य केँ देखि स्त्री-समागमक उत्सुकता नहि होइछ ?

हे प्रिये ! नरकक एवं स्वर्गक निवास मानवक मोने मे रहैछ। ई संसार गुण-दोष सँ भरल अछि। गुण स्वर्गक तथा दोष नरकक रूप थिक। चित्तक भूमिए मे तँ सुख एवं दुखक वृत्तिक उत्पत्ति होइछ जे मानवक शुभ-अशुभ कर्मक फल थिक। हे मेनके ! संतान उत्पत्तिक अनुकूल जे विधान अछि ओकरे नाम तँ प्रजापति थिक

जकरा अनुकूल मे प्रवृत्ति धर्म तथा प्रतिकूल मे कामशक्ति रहैछ। अतएव हे सुन्दरि ! नर नारी मे निमग्न भए ओकरा सँ सोझ सम्पर्क स्थापित करए चाहैछ तदर्थ ओकरा सम्मिलनक आकांक्षा मे अत्यधिक विकलताक अनुभव होइछ। जेना जल सूर्यक रश्मि पर चढ़ि मेघरूप मे अम्बरगामी भए वर्षाक रूप मे पृथ्वी पर उतरैछ तथा सूर्यक किरण पुनि ओकरा उपर लए जाइछ तहिना मनुष्य उर्ध्वगमन करैछ, पतित होइछ तथा पुनः उठैछ। एवंक्रमें स्वर्ग एवं पृथ्वीक मध्य ओकर आवागमन होइत रहैछ।

हे मनोरमे ! एक दिसि जँ दिव्यताक काल्पनिक गगनचुम्बी शिखर अछि तँ दोसर दिसि अनलपूर्ण शोणितक प्रलोभनपूर्ण आह्वान और मध्य मे संसारक सम्बन्धक प्रस्तरीय भूतल जकरा पार करब अत्यन्त दुष्कर थिक। मनुष्य कहुखन तँ एम्हर देखैछ आ कहुखन ओम्हर, कहुखन प्रेमक आकर्षक एवं मनमोहक रूप सँ लुब्ध होइछ तँ कहुखन संन्यास ग्रहण करैछ। एहि प्रकारें द्विविधा मे निमग्न रहैछ जे यथार्थे थिक किएक तँ प्रेम मानवीय प्रकृति तथा संन्यास परमेश्वर थिक। अतः एहि दुहू मे परस्पर विरोध अछि। तखन मनुष्य समन्वय बिना कएने प्रकृति और परमेश्वर दुहू केँ कोना प्राप्त कए सकैछ ?"

विश्वामित्रक द्वंद्वपूर्ण वाणी केँ सुनि मेनका ईश्वर तथा प्रकृति मे सामंजस्य केँ देखबैत बजलीह—"हे नाथ ! प्रकृति एवं परमेश्वरक अद्वैतताक अनुभव वा प्रेम एवं संन्यासक मध्य भावात्मक सन्तुलन तखनहि होइछ जखन मोन सांसारिक प्रपञ्चक

प्रलोभन सँ मुक्त भए शान्त तथा सुस्थिर भए जाइछ जकर सन्तुलन-साधना बड़ दुष्कर थिक। अतएव बैराग्य रागहीनता नहि भए विशेष राग; संसारक प्रति निषेधात्मक मोनक स्थिति नहि भए विधि एवं निषेधक समन्वय तथा निम्न स्थल सँ ऊर्ध्वगमनक निमित्त संघर्ष नहि भए एक उज्ज्वल नैसर्गिक जीवनक साधना थिक।

हे स्वामी ! नारीक प्रेमपूर्ण अन्तस्क बिचार सँ तीन रूप एवं स्थिति अछि—एक प्रेयसी थिक जे हृदयक ज्वरकेँ शान्तिक निमित्त सहचरीक पद ग्रहण करैछ; दोसर परिणीता ओ नारी थिक जे अपन स्वामीक महिषी तँ थिक किन्तु ओ ओकर प्रेम सँ वञ्चित रहैछ किएक तँ प्रेमिका सन निर्लज्जता सँ ओ अपन प्रिय केँ मुग्ध नहि कए सकैछ और तेसर ओ थिक जे नरक गुण पर मुग्ध भए ओकर सहधर्मिणी बनैछ एवं अपन स्वामीक अखण्ड प्रेम केँ प्राप्त करैछ। एहि मे सँ पहिल मे अतृप्ति, दोसर मे ईर्ष्या और तेसर मे शान्ति एवं विश्रान्ति रहैछ। पहिल मे आदान, दोसर मे प्रदान तथा तेसर मे आदान और प्रदान दुहू पाओल जाइछ। अतएव हम ओहि नारीक प्रतीक छी जे रूप, गुण, स्नेह एवं अनुराग सँ मानवी सन कोनो एके पुरुष सँ नहि रहि प्रेम केँ मानवीक निधि नहि बूझि अपना निमित्त प्रेम केँ क्रीड़ा वा विनोदक वस्तु बुझैत अछि। तदर्थ हे स्वामी ! विषय जे एक ने एक दिन अवश्ये छोड़त तकरा किएक नहि स्वयंए छोड़ि अनन्त सुखक संभागी बनैत छी ?"

मेनका एहि तरहक बचन कें सूनि विश्वामित्र स्नेह सँ आतुर एवं चिंता सँ कातर भए बजलाह—"हे मनोरमे ! प्रेम हृदयक वस्तु थिक बुद्धिक नहि । वस्तुतः मानवक श्रेय तँ प्रणय, करुणा, आत्म-प्रकाश, समर्पण, त्याग, तपश्चरण एवं बुद्धिक सुप्रयोग मे निहित अछि । मानवक कल्याण तँ तखनहि भए सकैछ जखन ज्ञान समता व्यापक, परस्पर दृढ़ विश्वास तथा धर्मनिष्ठ मानवक एक उज्ज्वल इतिहास होयत । हे मेनके ! स्त्री और पुरुष जगतक व्यापक सत्यक दू प्रमुख रूप थिक जकर भेद, सन्बन्ध, आकर्षण, अनुराग एवं सम्मिलन मात्र सृष्टिक परम्पराक निमित्त नहि भए जीवनक पूर्णताक हेतु होइछ ।

यद्यपि जीवन मे दुहूक समान स्थान अछि तथापि नारीक अंग मे निर्लोम सम्वेदक व्यापक सम्भावनाक विकास भेला सन्ता ओकर रूप लावण्य मे आकर्षण नरक उद्दीपनक एक अनन्त स्रोत स्वरूप थिक जे पुरुषक निमित्त अतिचारक कारण बनि जाइछ तथा काम शारीरिक आकांक्षा मात्र नहि रहि मानसिक वासनाक रूप मे उत्पन्न होइछ । भोगक मर्यादा मातृत्वक मान, सृजनक गौरव तथा नारीक संग समानताक सहयोग कामक समन्वयक सिद्धान्त थिक । नारीक मातृत्व एवं ओकर प्रणय प्रेमक विश्रम्भक अवलम्ब चाहैछ । कोनो नारी अपन इच्छा सँ अपना कें ने सामान्या बनेबाक वा ने अपन रूप एवं सौन्दर्य कें सामाजिक प्रदर्शन करेबाक चाहैत अछि । ओकर रूपक प्रदर्शन एवं रतिक रहस्यक सार्वजनिक उदघाटन ओकर श्लीलताक मर्यादाक अतिक्रमण थिक ।

हे मेनके ! नारी पुरुषक मनोविनोदक वस्तु नहि भए सृष्टिक अनुपम अलंकार एवं विधाताक एक मनोहर सृष्टि थिक। यौवन काल मे जखन पुरुषक चेतना प्रस्फुटित होइछ तँ यौवनक सौन्दर्य सँ सम्पन्न नारी एक दिव्य आकर्षणक रूप मे ओकरा समक्ष अबैछ तथा प्रकृति एवं मोनक आकांक्षा काम और सौन्दर्य पर केन्द्रित भए नर-नारीक व्यापक सम्बन्ध कें निर्धारण करैछ। चेतनाक मध्याह्न सूर्यक प्रकाश मे नारीक रूप कमल अपन पूर्ण प्रतिभा मे प्रस्फुटित भए पुरुषक दृष्टि कें विस्मित एवं विमुग्ध करैछ जे ओकर यौवनक उन्माद थिक जकर दाम्पत्य-प्रेम तथा वात्सल्य दुई प्रधान भाव थिक। मातृत्वक पूर्ण गौरवक निमित्त दाम्पत्यक साधना मे नारी पति कें अपन स्नेहपूर्ण सहयोग तथा ओजपूर्ण संगठन सँ ओकर विकास एवं नूतन जीवनक निर्माणक प्रेरणा दैछ।

हे सुन्दरि ! वात्सल्य भावक निमित्त नारीक जीवन धन्य थिक। मातृरूपक ओ दिव्य सौन्दर्य सतत वंदनीय थिक। सृजन, पोषण, लालन, पालन आदिक भाव तथा एहि हेतु अपेक्षित त्याग, सेवा, ममता, माधुर्य आदि कें अपना कए नारी-जीवनक महिमा असीम अछि। पति-वियोग मे नारीक नेत्रक अश्रुकण संतान कें देखितहिं आनन्दातिरेक मे परिणत भए जाइछ तथा अपन संतानक मुँह देखैत ओ दारुण सँ दारुण संताप कें सहैत अपन संतानक अभ्युदयक सतत कामना करैछ। अतएव हे मेनके ! निवृत्ति ग्लानि, पलायन कुत्सित क्रम तथा निःश्रेयस पराजित

बुद्धिक श्रम थिक जे मनुष्य कें निर्देह कए ओकर प्रगतिक मार्ग कें अवरुद्ध करैछ।''

विश्वामित्रक एवंक्रमक बाणी कें सूनि मेनका अत्यन्त गम्भीर भए बजलीह—''हे स्वामी ! रति, तृप्ति एवं तुष्टि मोनक विशेष वृत्ति थिक। इन्द्रिय पर थिक, इन्द्रियहु सँ पर मोन, मोन सँ पर बुद्धि, बुद्धि सँ पर महदात्मा, महदात्मा सँ पर अव्यक्त और अव्यक्त सँ पर पुरुष थिक। पुरुषे अन्तिम सीमा तथा परमगति थिक। हे नाथ ! जीव जतेक मोन कें प्रीतकर सम्बन्ध कें स्थापित करैछ ततबेक ओकरा हृदय मे शोकक काँट गरैछ। तदर्थं विवेकी समस्त कर्म कें त्यागि स्पृहा, ममता एवं अहंकार सँ रहित भए प्रारब्धानुसार प्राप्त विषय कें ग्रहण कए शान्ति कें प्राप्त करैत अछि।''

मेनकाक एहि बचन कें सूनि मुनि नितान्त ऊग्र भए बजलाह—''हे मेनका ! जगतक शत्रुहीन समृद्ध साम्राज्य एवं देवताक आधिपत्यहु मे हमरा ओ श्रेय नहि बूझि पड़ैछ जे इन्द्रिय सुखक अवरोधक एहि शोक कें निवृत्त कए सकए।

हे प्रिये ! जीवनक सहज रूप राग मे पाओल जाइछ वैराग्य मे नहि। जगतक समग्र वस्तुक स्वरूप सहज थिक जकर ने तँ कोनो स्वरूपे अछि वा ने किओ ओकरा वर्णने कए सकैछ वा ने वाणीक द्वारा ओकर अभिव्यञ्जने कएल जा सकैछ। सहज सत्ता जेना ब्रह्माण्ड मे रहैछ तहिना ओ पिण्डहु मे परिव्याप्त अछि। अतएव ओकर प्राप्तिक प्रयास ब्रह्माण्ड मे नहि कए पिण्डहि मे

सरलता सँ कएल जा सकैछ। हे मेनका ! देहरूपी वृक्ष केँ जँ चित्ररूपी अहंकार तथा विशुद्ध विषयरूपी रस सँ सिक्त कएल जाइछ तँ ओ कल्पवृक्ष बनि निरंजन फल केँ दैछ जाहि सँ महासुखक प्राप्ति होइछ ।

हे सुन्दरि ! व्यर्थक तप एवं तपस्याक कोन आवश्यकता ? ई संसार तँ मोनहिक सृष्टि थिक तथा एहि शरीरे मे तँ गङ्गा, यमुना एवं सूर्य-चन्द्रक बास अछि । एतहि तँ निराकार रूप मे परमात्मा फूलक सुगन्ध सन मानवक स्वरूपक मे सन्निहित अछि जे इन्द्रिय सुखहिक द्वारा सँ तँ प्राप्त भए सकैछ। तदर्थ अपन अन्तरात्मा केँ देखैत एवं विषय वस्तु मे अनुरक्त नर-नारी अपन दिव्य-प्रेमहि सँ तँ मोक्ष केँ प्राप्त करैत अछि ।"

एवंक्रमेँ आलाप-प्रलाप मे रंगराइत सन्धा विभावरीक रूप धारण कएल तथा नील-गगन मे स्थित चन्द्रमा ओहि दम्पत्ति केँ निरखि बिहुँसए तथा चन्द्रिका हुनकालोकनिक आनन पर खिलखिला केँ हँसए लागल। चन्द्र एवं चन्द्रिकाक हास्य, कम्पन तथा सिहरन केँ देखि मेनकाक नारी हृदय मे एक मधुर प्रस्पन्दन आन्दोलित भए उठल । फलतः ओ उन्मत्त भए मुनिक अंक मे स्नेहातुर आसीन होइत बजलीह—"हे नाथ ! निशा ज्योत्सनाक दुकूल तथा तारावलीक आभूषण केँ धारण केँ तँ मुग्धासन प्रतीत होइछ और नारी जकर प्रकाश सँ जगत उद्भासित होइछ तथा सूर्य एवं चन्द्र जकरा शुभ्ररूपक ज्योतिपुञ्ज थिक

तथा जे रात्रि एवं दिवस में आलोक विकीर्ण करैछ ओ प्रसवक वेदना सँ आक्रान्त भए प्रभाविहीन प्रतीत होइछ ।"

मेनकाक भावी जननीक सरस गौरव तथा नवागंतुकक मधुमयी कल्पना मे विभोर प्रकृति सहानुभूति मे वृक्ष कें श्वेत छत्र, माँटिक पाँक कें दही, नदीक जल के दूध, लता कें मुक्ताक माला तथा काननक जीव-जन्तु कें सहचरी बनाए पीयुष-वर्षी चन्द्रमा सँ ओकर चेतनताक निमित्त ओकरा पर फुहाराक वर्षा कराओल ।



४

[इन्द्रक नन्दन कानन : रम्भा, तिलोत्तमा एवं उवर्शीक वार्त्तालाप]

कृष्णागरु एवं चाननक सौरभ तथा विशाल स्तनक व्यापकता सँ अलंकृत देवरमणी रम्भा, तिलोत्तमा एवं उवंशी अपन अनुपम शील एवं नवीन यौवन लक्ष्मी जकर गन्ध, मोद और प्रमोद विशेष लक्षण तथा हास, क्रीड़ा एवं मैथुन अनुराग थिक पारस्परिक विनोदक वार्त्तालाप मे निमग्न छलीह। एहि अभ्यन्तर अपन नूपुरक झंकार सँ समस्त दिसा केँ झनकबैत एवं कालिन्दी सन सन्तुलित केश-राशि सँ सभहक नेत्र केँ आकृष्ट करैत चित्रलेखा पदार्पण कए नितान्त सरस वाणी मे बजलीह—"हे सखि! साँझक छवि, गगनक नीलिमा, वनरेखाक श्यामलता एवं स्वर्णक प्रतिभा सन मेनका केँ एक नितान्त सुन्दरि कन्या उत्पन्न भेलैक अछि जकर प्रसून सन आलाप एवं चन्द्र सन शारीरिक कान्ति सँ वन-प्रान्त उल्लसित एवं मुखरित भेल अछि। ओहि शिशु केँ पाबि ओकर यौवनक उच्छृंखलता एवं उन्माद मातृत्वक स्वच्छ शुभ्र प्रफुल्लता मे परिणत भए गेलैक अछि तथा ओ अपमानिता भेलहुँ सन्ता अपन मातृपद केँ नहि छोड़ए चाहैछ। ओकर हर्ष करुणा मे मिश्रित एवं नेत्रक नोर स्निग्ध अमृत मे परिणत भए जाइछ तथा ओकरा वात्सल्यक समक्ष पतिक स्नेहोक आब कोनहु स्थान नहि छैक। ओ सतत ओहि शिशुक

कल्याण-कांक्षा मे निरत भए अपन साज-शृङ्गार कें बिसरि गेलीह तथा आब ओकरा आँजन एवं अंगरागहुक कोनो महत्व नहि अछि। ओकर निरस ओठ एवं शुष्क अंग शिशुक-मात्र एक हँसी मे पुनि प्रफुल्लित एवं रंजित भए उठैछ। ओकरा अपन शाश्वत तथा विराट मातृरूपक समक्ष कोनहुटा वस्तुक काँक्षा नहि छैक।"

चित्रलेखाक ई कथा स्वर्गक ललामभूता देवकन्या लोकनि कें जे स्वतन्त्र जीवन एवं स्वच्छन्द यौवनक सतत काँक्षा करैछ मर्माहत कएल तथा ओलोकनि मेनकाक स्नेह सँ आतुर तथा जरा-मृत्यु एवं यौवन जीवनक सुख-दुखक भावी व्यथाक चिंता सँ कातर भए नितान्त शोक मे निमग्न भए गेलीह। एहि अनन्तर उर्वशी अपन लावण्यक कान्ति सँ तथा आभूषणक झङ्कार सँ सभहक ध्यान कें भंग करैत ओतए प्रादुर्भूत भए बजलीह—"हे सखि! मेनकाक काम-लोल कटिक कम्पन एवं भौंहक संचालन सँ देवताक तपनक निमित्त देवराज ओकरा मुक्तिक आदेश प्रसारित कएलैन्ह अछि। हाय रे अप्सराक दुर्भाग्य! ओकर विषम वेदना कें के बुझतैक? ओ तँ अमुक्त मदनक रंजिका मात्र थिक। हे सखि! ओ दिन ओकरा हेतु कतेक दारुण होयत जखन ओ अपन शिशु कें छोड़ि ओहि भूमि सँ वियुक्त होयत जतक वन-उपवन, सरिता-निर्झर, द्रुमबल्ली तथा उषा-निशाक सुरम्य सहवासक पूर्ण आनन्द उपलब्ध भेलैक तथा जतए प्रियतम अपन रभसपूर्ण आवेश सँ ओकर समस्त अङ्गक उत्पीड़न कएल। ई प्रदीप्त आनन्द सुरपुरक शीतलता मे कतए उपलब्ध भए सकैछ?"

उर्वशीक उपर्युक्त कथा केँ जे मेनकाक मानवी आचरणक समर्थन मे छल सूनि रम्भा प्रतिवादक स्वर मे बजलीह—"हे सखि ! हँसनी कतहु बाँसक वन मे अनुरक्त भेल अछि तथा स्वर्ण कलश केँ की किओ खापरि सँ ढकलक अछि। नारीक रहस्य एवं निष्ठुरते तँ सार थिक जाहि सँ पुरुषक अतृप्ति, विकलता एवं दुखक जन्म होइछ। नारी सतत पुरुष के नवीन एवं अपरिचिते प्रतीत होइछ। ओ कहुखन तँ अदम्य शक्ति स्वरूपा और कहुखन अवश अबलाक रूप धारण कए मलय-पवनहु सँ कँपैछ तथा उषाक सुकुमार किरणहु ओकरा दग्ध करैछ। जँ संसार जीवन सँ विरक्त भए ओकर अपनत्व चाहैछ तँ ओ अपन व्यथा केँ ओकरा दए अम्बर मे प्रक्षिप्त भए जाइछ। किन्तु देवनारी मेनकाक आचरण तँ ओहि कम्बल सन अछि जे आगि लगला सँ स्वतः तँ जड़िते अछि संगहि अपन ओढ़िनिहार केँ सेहो जड़बैत अछि।"

रम्भाक कटु बचन केँ पुष्ट करैत तिलोत्तमा तीलक फूल सन अपन नासिका केँ सकुचबैत एवं बन्धूक पुष्प सन अधर तथा महुआक फूल सन स्निग्ध कपोलक गर्व मे ऐंठैत मेनकाक आलोचना करैत बजलीह—"हे सखि ! अप्सरा की ककरहु परिणीता थिक जे प्रेरणा, प्रीति एवं करुणाक द्वारा अपन पतिक कल्याण मे भूसाक आगि मे जड़निहार सन सतत कलपि-कलपि केँ मरए और पति नित्य नवीन मुग्धाक संग प्रेमालाप करए ! ओ तँ एक मायाविनी थिक जकर चितवनक निर्माण पुरुषक उत्पीड़नक निमित्त भेल अछि। हे रम्भे ! अपन रूप-पिपासा मे पुरुष

केँ आबद्ध कए तरपाएबे मे तँ अप्सराक कौतुक रहैछ। अतएव मेनकाक उन्मत्त जीवन जे ऐना मे अपनहि मुँह केँ देखि भ्रम मे चन्द्रमा बूझि कँपैछ, केशपाश केँ नील घनक घटा बूझि हताश होइछ तथा अपनहि मधुर बचन केँ कोइलीक काकली बूझि शशंकित भए जाइछ तँ अलौकिके थिक किन्तु उर्वशीक पक्षपातपूर्ण विचारहु मे तँ ओकर अन्तर्तमक अनुभूति सन्निहित अछि जकरा ओ भूतल पर त्यागि पुनि एतए अएलीह !"

रम्भा एवं तिलोत्तमाक तिरस्कारपूर्ण कथा केँ सुनि उर्वशी अत्यन्त गम्भीर भए बजलीह—"हे सखि ! गहन अनुभवक बिना वास्तविक अनुभूति कोना भए सकैछ ? आश्चर्य अछि जे विधाता अप्सरा केँ सुकुमार अंग तँ देलथिन्ह किन्तु ओकर हृदय पाथर सन कठोर किएक बनौलथिन्ह ?

वस्तुतः ओ नारी धन्य थिक जकरा मोतीक हार तँ बोझ सन प्रतीत होइछ और पर्वत सन भारी मान केँ हृदय मे प्रक्षिप्त रखैत गर्विनीक आचरण करैत अछि। हे तिलोत्तमे ! साध्वीक मोनक भावना केँ कुलटा तथा प्रसूतिक पीड़ा केँ बाँझ कोना बुझतैक ? साँप केँ कतबौक दूध और लाबा देला पर की ओ पोस मानैछ तथा पाथर सहस्रो बेर अमृत मे भिजौला पर की कोमल होइछ ?

हे सखि ! मानवी तँ धन्य थिक जकरा समग्र विभव स्वतः उपलब्ध छैक। प्रेमक परिणाम मातृत्वे मे तँ निहित अछि। मातृत्वक उपरान्त भने सुख स्वप्न भए जाउ तथा रोग, शोक एवं जरा भने विषाद केँ आच्छादित करउ किन्तु नारी-जीवनक साफल्य तँ संतानक लालन-पालन मे हिमशिला सन सन्निहित रहैछ जे स्वतः

तँ बर्फ कें गलला सँ क्षीण होइछ किन्तु पयस्विनो बनि ततेक ने ओ असीम बनि जाइछ जे असंख्य सरिता ओकरा सँ उत्पन्न भए पालित होइछ। हे सखि! नारीक सौन्दर्य मे ज्योत्स्नाक उज्ज्वलता, शशिक मादक मुस्कान एवं चपलाक चकाचौंध तँ पाओल जाइछ किन्तु ओकर सौन्दर्य-तरंग चंचल एवं ऊच्छृंखल नहि रहि यौवनक पूर्ण विकास एवं आत्माक चिरंतन पुकार थिक जाहि मे नारीक महानता पाओल जाइछ। अतएव पुरुष जँ क्रूर थिक तँ नारी करुणा जकरा पर समस्त सदाचार आधारित पाओल जाइछ। किन्तु हमरा लोकनि तँ अप्सरा छी। अप्सरा अपन सन्तानक पालन कोना करतीह? ओ तँ प्रकृतिक सुरम्य स्थल पर रमणक, मधुरालापक तथा स-उल्लास मादकता मे निमग्न रहि विलासक अधिकारिणी थिकीह। कतेक नीक होयत जँ हमरा लोकनि एहि पारस्परिक कटुतापूर्ण आलोचना कें छोड़ि ओकरा संतानप्राप्तिक निमित्त बधाइ एवं शिशु कें खेलौना दए नारीक करुण एवं स्नेह रूप केँ साकार करितहुँ!"

उर्वशीक एहि परामर्शयुक्त वाणी केँ स्वीकार कए स्वर्गक प्रतिष्ठा प्राप्त रम्भा, तिलोत्तमा एवं उर्वशी द्यु लोक सँ धरातल पर उतरैत, गबैत, सूर्यक किरण कें अपन लावण्यक ज्योत्सना सँ तिरस्कार करैत, कनक प्रतिभा सन प्रतीत भेलीह। काननक धरातल पर प्रकाश दीप सन एवं मलयपवन सन देवरमणी लोकनि अपन दीप्ति एवं सौरभ कें प्रसारित कए ओहि भू-भाग कें प्रदीप्त, सुरभित एवं गुञ्जित कएल।

●●●●

[तपोभूमि : मेनका, उर्वशी, रम्भा एवं चित्रलेखाक वार्त्तालाप :
मेनकाक कोर मे ओकर नवजात कन्या]

मेनकाक प्रसून सन कन्या केँ देखि देवरमणी लोकनि केँ सुधा-तरंग सन अपार शान्ति प्राप्त भेलैन्ह तथा कहुखन तँ ओ लोकनि ओकर दुग्ध-धवल दृष्टि सँ विमुग्ध होइत छलीह तँ कहुखन ओकर कमल सन कोमल मुँह केँ निहारि असीम आनन्द केँ प्राप्त करैत छलीह। एवंक्रमे कुशल क्षेम तथा शिशुक दुलार-मलार मे किछु काल बीतलाक उपरान्त विलासपूर्ण गीत, क्रीड़ा-चापल्य, विनम्र चितवन, मधुर वाणी एवं मनोरम अवयव सँ युक्त उर्वशी अत्यन्त स्नेह सँ मेनका सँ पूछल—"हे मेनके ! जीव कर्म मे तँ स्वतंत्र किन्तु कर्म-फल भोगवा मे परतंत्र अछि। परमात्माक संग जीवक स्वतन्त्रता और प्रकृतिक संग ओकर परतन्त्रता बढ़ैछ। अतः परतन्त्रता तँ दुख थिक। तदुपरान्त मनुष्य देहक विविध अवयव एवं क्रिया धर्म एवं अवस्थाक आधार पर निर्धारित रहैछ जे अवस्थानुसार छिन्न-भिन्न भए जाइछ। ई शरीर तँ घरक भीत पर बनल गेरु सँ निर्मित चित्र सन थिक जकरा लोक वास्तविक बूझि ओकर पाँछा बेहाल रहैछ।

हे सखि! ई सम्पूर्ण जगत घटनाक एक निरन्तर प्रवाह थिक। एहि प्रवाह मे एक घटना दोसर सँ आगाँ बढ़ैत जाए रहल अछि।

अतएव त्यागहि मे आनन्द कें तकबाक चाही। जे वस्तु दोसराक थिक तकरा प्रति मोह केहेन ?"

उर्वशीक उपर्युक्त वाक्य कें सूनि मेनका ओकर कोर सँ अपन कन्या कें लए दुलार करैत बजलीह—"हे उर्वशी ! मर्त्य यद्यपि अन्न सन उत्पन्न होइछ, पाकैछ, नष्ट होइछ और पुनि उत्पन्न होइछ तथापि ओकरा जे आनन्द छैक से स्वर्गवासी कें दुर्लभ अछि। एहि नेना कें मात्र ओएह व्यक्ति टा तँ चिन्हत जकरा माय हेबाक गौरव प्राप्त छैक। हे सखि ! स्वर्गलोक मे यद्यपि भूख-प्यास नहि रहैछ, कोनो प्रकारक संताप नहि पाओल जाइछ तथा स्वर्गवासी शोक कें पाछू छोड़ि द्वन्द्व सँ उपर उठि आनन्द मे निमग्न रहैछ किन्तु ओकरा इन्द्रिय-विषयक उपभोग कतए? ओ तँ सतत् रूपक पियासल रहैछ जकरा ओ परिरम्भपाश मे आवद्ध नहि भए तृष्णा-पूर्ण नयनहि सँ पान करैछ। अतएव हे उर्वशी ! मर्त्यक क्षणिक उन्माद तरंग पर हम बलिहारि छी।"

मेनकाक दर्पपूर्ण उक्ति सँ रम्भा आवेश मे आबि बजलीह—"हे मेनके ! पतिक कल्याणक निमित्त पति प्रिय नहि भए अपन आत्माक संतुष्टिक निमित्त तथा पत्नीक कामनाक निमित्त पत्नी प्रिय नहि भए अपन रतिक तुष्टिक निमित्त प्रिय होइछ। हे सखि ! आत्मा इन्द्रियरूपी ढोल कें पीटि संसारक ढोल सन तमोगुण-रूपी शब्द कें उत्पन्न करैछ। जँ संसार कें पकड़बाक हो तँ इन्द्रिये कें पकड़ी जाहि सँ तमोगुणरूपी शब्द स्वतः बंद भए जाएत !"

रम्भाक आवेशपूर्ण कथाक उत्तर दैत तिलोत्तमा उपहासक

क्रम मे बजलीह—"हे रम्भे ! मेनका भने एक संतानक माय भए गेलीह किन्तु एखन धरि ओ अल्पज्ञे तँ छथि जनिका डोरी मे हाथी-घोड़ाक और सीप मे लोहा एवं स्वर्णक भ्रम होइत छैन्ह जे ने तँ प्रकाश मे होइछ वा ने अंधकार मे। ओ तखनहि तँ होइछ जखन प्रकाश और अंधकार दुहू संयुक्त रहैछ। किन्तु हे मेनके ! मनुष्य केँ हृदयक कामना जखनहि छुटैछ तखनहि ओ मर्त्य सँ अमर भए जाइछ तथा मर्त्यलोकहि मे ब्रह्म केँ प्राप्त कए लैछ।

हे सखि ! एहि संसाररूपी चक्र मे आबद्ध नहि भए वसु, रुद्र, आदित्य, मरुत, साध्य एहि पाँचों सँ जीव जखन उपर उठि जाइछ तँ ओ ओहि लोक मे पहुँचैछ जतए ने तँ उदय होइछ वा ने अस्त ! जेना माँछ स्वच्छन्द रूप सँ नदीक पूर्व एवं अपर दुहू किनार मे अबैछ एवं पुनि जाइछ किन्तु किनार सँ असंग रहैछ तथा चिल्हौर स्वतंत्र आकाश मे विचरि पुनि अपन खोता दिसि पाँखि केँ समेटि केँ दौड़ैछ तहिना अप्सरहु अपन उद्देश्यक पूर्त्तिक उपरान्त आचरण करैछ। अतएव हे सखि ! देवराजक आदेशक पूर्त्ति कए यशक भागी बनि अखण्ड यौवनक पुनि उपभोग करू अन्यथा संतापक भागी बनि सतत दुखानुभव करब।"

तिलोत्तमाक स्पष्ट कथा सँ आक्रान्त भए उर्वशी ओकर भावी व्यथा सँ कातर भए बजलीह—"नहि ! नहि ! मेनका देवराजक नृत्यशालाक एक नर्त्तकी थिकीह जे स्पर्शमणि सन अपन संयोग सँ लोहा केँ तँ सोना बनाए सकैछ किन्तु लोहा केँ पारसमणि नहि बनाए सकैछ। ओकर सुकुमार कुञ्चित केश, कुमुद केसर सन

मनोरम रूप एवं अंगराग सँ विलिप्त उरोज जे हीराक हार सँ वेष्टित मुखाग्र श्वास-प्रश्वास सँ स्पन्दित भए मुनिक तप भंगक निमित्त निर्मित अछि। हे तिलोत्तमे! अप्सरा कतहु अपन संतानक लालन-पालन करए! ओ तँ विविध रसास्वादनक हेतु अछि।

हे मेनके! यद्यपि क्षेत्र एवं बीज दुहूक बिना वृक्षक उत्पत्ति नहि भए सकैछ किन्तु बीजे वृक्षक उपादानक कारण होइछ। क्षेत्र तँ मात्र निमित्तक कारण कहल जाइछ। अतएव हे सखि! वृक्ष बीजक रूपान्तर होइछ भूमिक नहि। तदर्थ एहि नेनाक उत्तरदायित्व ओकर पिता पर छोड़ि सत्वर इन्द्रपुरी कें प्रस्थान करू। हे सखि! मनुष्य सोचैत तँ किछु अछि और होइत किछु और छैक।"

उर्वशीक स्नेहयुक्त वाणी कें सूनि मेनका नेत्र मे नोर कें भरि बजलीह—"हे सखि! विधाता केहेन क्रूर छथि! संतानक अछैत हम ओकरा सँ वियुक्ता भए भरि आँखि देखियो तँ नहि सकैत छी। एहि वियोगक दारुण विपत्ति कें हम कोना सहि सकब?"

मेनकाक मातृहृदयक विह्वलता कें बूझि उर्वशी सान्त्वना दैत बजलीह—"हे मेनके! जगतक समस्त जीव तँ मरणशील अछि। अतएव सभ कें अपन प्रिय सँ एक ने एक दिन तँ वियुक्त अवश्य होमय पड़तैक। अतः हे सखि! पदार्थ मे उत्पत्ति, विनाश, परस्पर भेद-भाव आदि जे प्रतीत होइछ ओ केवल अविद्या जन्य थिक। एके श्वेत वस्त्र शुद्ध आँखि सँ देखला पर श्वेत किन्तु लाल चश्मा सँ देखला पर लाल बुझना जाइछ। एवंक्रमक रहस्य प्रज्ञावान तँ बुझैछ किन्तु अवोध बालक एहि सँ अनभिज्ञ रहैछ!

शोक एवं चिन्ता अन्तःकरणक धर्म थिक। मनुष्य अपन कर्मक द्वारा पुण्य एवं पापक संचय करैछ तथा कर्म फल कें भोगबाक निमित्त बारम्बार जन्म ग्रहण करैछ।"

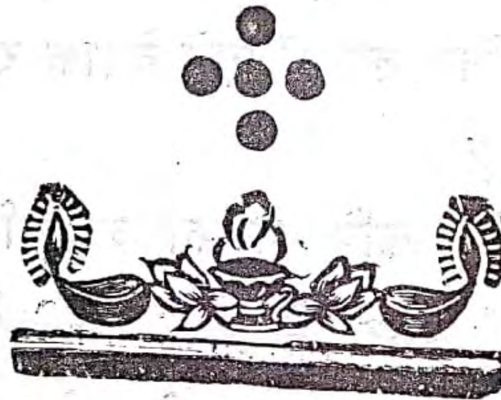
मेनका सँ एहि तरहें कहि अपन सुकुमार पाणिपल्लव, अरुण ओष्ठ, भास्वान दाँत एवं सुकृष्ण केश सँ युक्त देवरमणी लोकनि भूतल सँ स्वर्ग कें प्रस्थान कएलीह तथा मेनका अपन कोमल हृदय कें बज्र सन कठोर बनाए अपन कोरक नेना कें विश्वामित्रक कोर मे दए बजलीह—"हे मुनि ! लक्ष्मी कें जे व्यक्ति माँथ पर चढ़बैछ ओकर विनाश भए जाइछ। हे नाथ ! यौवन, जीवन, मोन, शरीरक छाह, धन और नारी ई छओ चञ्चल थिक। एहि मे स्त्री तँ करवट बदलिते पराया भए जाइछ। हे तापस ! शास्त्र, राजा तथा युवतीक के विश्वास कएलक अछि ? हम तँ अप्सरा छी, विरागी मे राग जगाबए वाली, सुर-नर सभहक मनोरंजनक निमित्त जकर प्रेम व्यापार प्रधान क्रीड़ा होइछ। हे तपस्वी ! हमर निष्ठुर हृदय एवं प्रेम कें की अहाँ नहि बूझने छलिऐक जे गन्धर्वराज विश्वावसुक द्वारा उत्पन्न समस्त प्रमदा मे श्रेष्ठ प्रमद्वारा कें कोना महर्षि स्थुल केशक आश्रमक समीप हम छोड़ि अपन अनुपम लावण्यक रक्षा कएल ? यद्यपि ओ एक मुग्धाक प्रेमक फल छल तथापि हम ओकर लालन पालन नहि कएल किन्तु ई तँ अहाँक तप-अहंकार, मिथ्या आडम्बर, देवराजक त्रास एवं विधाताक तिरस्कार रूपी विष-वृक्षक फल थिक। हे तपस्वी ! एक साधारण नारी

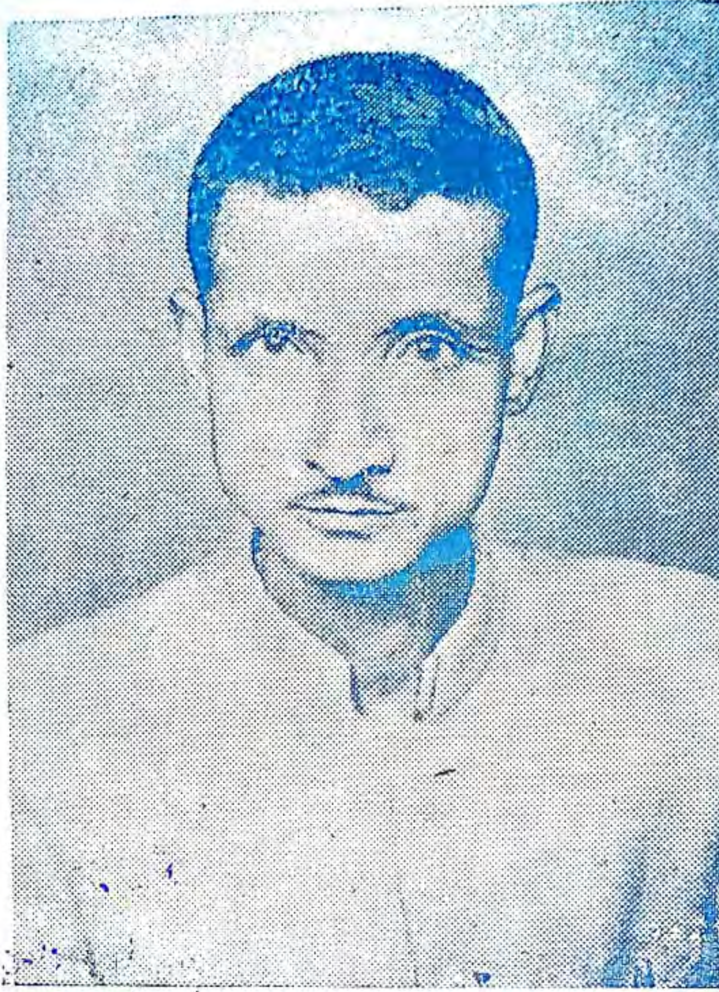
अपन रूपक चकाचौंध मे एक महान् तपस्वी कें कोना पतनक गार्त्त मे लए जाइछ तकर ज्वलन्त प्रमाण भावी पीढ़ी कें अहाँक चरित्र सँ उपलब्ध होयत और एहि नेनाक पुत्र समस्त भूमण्डल पर नितान्त पराक्रमी भए अखण्ड राज्य करत। हे महर्षि ! अहाँक एहि तरहक पतन देवताक कोपक निमित्त भेल जकर प्रधान कारण इन्द्रक त्रास छल। हम हुनकहि आदेश सँ अहाँक तप भंगक निमित्त आएल छलहुँ। हमर उद्देश्यक आब पूर्त्ति भए गेल। हम सतत प्रक्षिप्त रूप सँ एहि नेनाक रक्षा करैत रहबैक जे मायक धर्म होइछ !''

उपर्युक्त वाक्य कें कहि मेनका अन्तर्धान भए गेलीह तथा विश्वामित्र शिशु कें कोर मे लए किंकर्त्तव्यविमूढ़ भए ठाढ़े रहलाह। किछु कालक उपरान्त आवेश मे आबि बजलाह—''विषक जमीन मे विषक अंकुर उत्पन्न भेल। पुनि नारी-रूपी विष-लता बढ़ल। ओहि लता मे विषक धर, डारि और पात उत्पन्न भेल तथा पुनि ओहि लता मे विषहिक फल एवं फूल फुलाएल। ओहि विष-लता मे सँ विषक तन्तु बाहर भेल। पुनि ओ लता अपन विष-तन्तु कें प्रसारित कए नर वृक्ष कें उलझाए स्वत: ओकरा सँ लेपटा गेल।

आँखि, कान, नाक, प्रवृति इन्द्रिय तथा रूप, शब्द, गन्ध, स्पर्श आदि विषय अनर्थक जड़ि थिक। इन्द्रिय सतत मनुष्य कें विषय दिसि लए जाइछ तथा विषय विष सन घातक थिक। विषयासक्त कें आत्मा वा परमात्माक दर्शन नहि होइछ।''

एवंक्रमें सोचि कोरक नेना कें भूतल पर पटकि पुरुषक कठोरता एवं पिताक क्रूरताक बोध करबैत ओतए सँ ओ तँ प्रस्थान कएलैन्ह और नेनाक मनोरम रूप एवं स्निग्ध क्रन्दन कें सूनि काननक सरल शकुन्त द्रवित भए ओकर प्रतिपालन करए लागल जाहि निमित्त पश्चात् ओ नेना शकुन्तलाक नामे प्रसिद्ध भेलीह ।





लेखकक अन्य कृत ग्रंथ

१ महाकवि विद्यापति नाटक (मैथिली), मूल्य २) टाका मात्र ।
२. शास्त्रार्थ नाटक (मैथिली), मूल्य १) टाका ५० पैसा मात्र ।
३. कन्दर्पीघाट नाटक (मैथिली), मूल्य १) टाका मात्र ।
४. एकादशी (मैथिली), मूल्य एक टाका पचास पैसा मात्र ।
५. विद्याधर-कथा (मैथिली), मूल्य २) टाका मात्र ।
६. उर्वशी (मैथिली) मूल्य ३) टाका मात्र ।
७. धर्मव्याध कथा (मैथिली), मूल्य १) टाका मात्र ।
८. कालचक्र की उत्पत्ति एवं उत्पन्न कर्मों की संक्षिप्त व्याख्या (हिन्दी), मूल्य ६) रुपये ।
९. मैथिली साहित्यक आदिकाल (मैथिली), मूल्य ७) टाका पचास पैसा मात्र ।
१०. महाराजा लक्ष्मीश्वर सिंह (हिन्दी), मूल्य निःशुल्क ।

पुस्तक प्राप्ति स्थान

ग्रंथालय
टावर चौक, दरभंगा

एवं

शिक्षा सदन
सुपौल, सहरसा

श्री अमरनाथ झा

द्वारा—बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना–१

आवरण मुद्रण : कालिका प्रेस, पटना–४